आजाद हिन्द फौज

प्रस्तावना

आजाद हिन्द फौज या Indian National Army (INA) की स्थापना का विचार सर्वप्रथम **मोहन सिंह** के मन में **मलाया** में आया। मोहन सिंह, ब्रिटिश सेना में एक भारतीय सैन्य अधिकारी थे किंतु कालांतर में उन्होंने साम्राज्यवादी ब्रिटिश सेना में सेवा करने के स्थान पर जापानी सेना की सहायता से अंग्रेजों को भारत से निष्कासित करने का निश्चय किया।

आजाद हिन्द फौज के गठन के चरण

प्रथम चरण

जापानी सेना ने जब भारतीय युद्ध बंदियों को मोहन सिंह को सौंपना प्रारंभ कर दिया तो वे उन्हें आजाद हिन्द फौज में भर्ती करने लगे। सिंगापुर के जापानियों के हाथ में आने के पश्चात मोहन सिंह को 45 हजार युद्धबंदी प्राप्त हुये। यह घटना अत्यंत महत्वपूर्ण थी। 1942 के अंत तक इनमें से 40 हजार लोग आजाद हिंद फौज में सम्मिलित होने को राजी हो गये। आजाद हिंद फौज के अधिकारियों ने निश्चय किया कि वे कांग्रेस एवं भारतीयों द्वारा आमंत्रित किये जाने के पश्चात ही कार्रवाई करेंगे। बहु तसे लोगों का यह भी मानना था कि आजाद हिंद फौज के कारण जापान, दक्षिण-पूर्व एशिया में भारतीयों से दुर्व्यवहार नहीं करेगा या भारत पर अधिकार करने के बारे में नहीं सोचेगा।

भारत छोड़ो आंदोलन ने आजाद हिंद फौज को एक नयी ताकत प्रदान की। मलाया में ब्रिटेन के विरुद्ध तीव्र प्रदर्शन किये गये। 1 सितम्बर 1942 को 16,300 सैनिकों को लेकर आजाद हिन्द फ़ौज की पहली डिवीजन का गठन किया गया। इस समय तक जापान यह योजना बनाने लगा था कि भारत पर आक्रमण किया जाये। भारतीय सैनिकों के संगठित होने से जापान अपनी योजना को मूर्तरूप देने हेतु उत्साहित हो गया। किंतु दिसम्बर 1942 तक आते-आते आजाद हिन्द फौज की भूमिका के प्रश्न पर मोहन सिंह एवं अन्य भारतीय सैन्य अधिकारियों तथा जापानी अधिकारियों के बीच तीव्र मतभेद पैदा हो गये। दरअसल जापानी अधिकारियों की मंशा थी कि भारतीय सेना प्रतीकात्मक हो तथा उसकी संख्या 2 हजार तक सिमित

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

रखी जाए किन्तु मोहन सिंह का उद्देश्य 2 लाख सैनिकों की फ़ौज तैयार करने का था।

द्वितीय चरण

आजाद हिंद फौज का द्वितीय चरण 2 जुलाई 1943 को सुभाषचंद्र बोस के सिंगापुर पहुंचने पर प्रारंभ हुआ। इससे पहले गांधीजी से मतभेद होने के कारण सुभाषचंद्र बोस ने कांग्रेस की सदस्यता से त्यागपत्र दे दिया था तथा 1940 में **फारवर्ड ब्लाक** के नाम से एक नये दल का गठन कर लिया था। मार्च 1941 में वे भारत से भाग निकले, जहां उन्हें नजरबंद बनाकर रखा गया था। भारत से पलायन के पश्चात उन्होंने रूसी नेताओं से मुलाकात कर ब्रिटेन के विरुद्ध सहायता देने की मांग की। जब जून 1941 में सोवियत संघ भी मित्र राष्ट्रों की ओर युद्ध में सम्मिलित हो गया तो सुभाषचंद्र बोस जर्मनी चले गये। तत्पश्चात वहां से फरवरी 1943 में वे जापान पहुंचे। उन्होंने जापान से ब्रिटेन के विरुद्ध सशस्त्र संघर्ष प्रारंभ की मांग की। जुलाई 1943 में सुभाषचंद्र बोस सिंगापुर पहुंचे जहां **रासबिहारी बोस** एवं अन्य लोगों ने उनकी मदद की। यहां दक्षिण-पूर्व एशिया में निवास करने वाले भारतीयों तथा बर्मा, मलाया एवं सिंगापुर के भारतीय युद्धबंदियों ने उन्हें महत्वपूर्ण सहायता पहुंचायी।**अक्टूबर 1943 में उन्होंने सिंगापुर में अस्थायी भारतीय सरकार का गठन किया।** सिंगापुर के अतिरिक्त रंगून में भी इसका मुख्यालय बनाया गया। धुरी राष्ट्रों ने इस सरकार को मान्यता प्रदान कर दी। सैनिकों को गहन प्रशिक्षण दिया गया तथा फौज के लिये धन एकत्रित किया गया। नागरिकों को भी सेना में भारतीय किया गया। स्त्री सैनिकों का भी एक दल बनाया गया तथा उसे **रानी झांसी रेजीमेंट** नाम दिया गया। जुलाई 1944 में सुभाषचंद्र बोस ने गांधी जी से भारत की स्वाधीनता के अंतिम युद्ध के लिये आशीर्वाद मांगा।

शाह नवाज के नेतृत्व में आजाद हिन्द फौज की एक बटालियन जापानी फौज के साथ भारत-बर्मा सीमा पर हमले में भाग लेने के लिये इम्फाल भेजी गयी। किंतु यहां भारतीय सैनिकों से दुर्व्यवहार किया गया। उन्हें न केवल रसद एवं हथियारों से वंचित रखा गया अपितु जापानी सैनिकों के निम्न स्तरीय काम करने के लिये भी बाध्य किया गया। इससे भारतीय सैनिकों का मनोबल टूट गया। इम्फाल अभियान की विफलता तथा जापानी सैनिकों के पीछे लौटने से इस बात की उम्मीद समाप्त हो गयी कि आजाद हिंद फौज भारत को स्वाधीनता दिला सकती है। जापान के द्वितीय विश्व युद्ध में आत्मसर्पण करने के पश्चात जब आजाद हिंद फौज के सैनिकों को युद्ध बंदी के रूप में भारत लाया गया तथा उन्हें कठोर दंड देने का प्रयास किया गया तो भारत में उनके बचाव में एक सशक्त जनआंदोलन प्रारंभ हो गया।

विश्व युद्ध के पश्चात राष्ट्रीय विप्लव-

जून 1945 से फरवरी 1946 ब्रिटिश शासन के अंतिम दो वर्षों में राष्ट्रीय विप्लव के संबंध में दो आधारभूत कारकों का विश्लेषण किया जा सकता है-

- इस दौरान सरकार, कांग्रेस एवं मुस्लिम लीग तीनों ही कुटिल समझौते करने में संलग्न रहे। इससे साम्प्रदायिक हिंसा को बढ़ावा मिला, जिसकी चरम परिणति स्वतंत्रता एवं देश के विभाजन के रूप में सामने आयी।
- श्रमिकों, किसानों एवं राज्य के लोगों द्वारा असंगठित, स्थानीय एवं उग्रवादी जन प्रदर्शन। इसने राष्ट्रव्यापी स्वरूप धारण कर लिया। इस तरह की गतिविधियों में- **आजाद हिंद फौज के युद्धबंदियों को रिहा करने से संबंधित आन्दोलन, नौसेना के नाविकों का विद्रोह, पंजाब किसान मोर्चा का आन्दोलन,**

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

ट्रावनकोर के लोगों का संघर्ष तथा तथा तेलंगाना आंदोलन प्रमुख है।

जब सरकार ने जून 1945 में कांग्रेस से प्रतिबंध हटाकर उसके नेताओं की रिहा किया तो उसे उम्मीद थी कि इसे जनता हतोत्साहित होगी। लेकिन इसके स्थान पर भारतियों का उत्साह दोगुना हो गया। तीन वर्षों के दमन से जनता में सरकार के विरुद्ध तीव्र रोष का संचार हो चुका था। राष्ट्रवादी नेताओं की रिहार्यी से जनता की उम्मीदें और बढ़ गयीं। रूढ़िवादी सरकार के समय की वैवेल योजना, मौजूदा संवैधानिक संकट को हल करने में विफल रही।

- जुलाई 1945 में, ब्रिटेन में श्रमिक दल सत्ता में आया। क्लीमेंट एटली ने ब्रिटेन के नये प्रधानमंत्री का पदभार संभाला तथा पैथिक लारेंस नये भारत सचिव बने।
- अगस्त 1945 में, केंद्रीय एवं प्रांतीय व्यवस्थापिकाओं के लिये चुनावों की घोषणा की गयी।
- सितम्बर 1945 में, सरकार ने घोषणा की कि युद्ध के उपरांत एक संविधान सभा गठित की जायेगी।

सरकार के दृष्टिकोण में परिवर्तन के कारण

- युद्ध की समाप्ति के पश्चात विश्व-शक्ति-संतुलन परिवर्तित हो गया- ब्रिटेन अब महाशक्ति नहीं रहा तथा अमेरिका एवं सोवियत संघ विश्व की दो महान शक्तियों के रूप में उभरे। इन दोनों ने भारत की स्वतंत्रता का समर्थन किया।
- ब्रिटेन की नयी लेबर सरकार, भारतीय मांगों के प्रति ज्यादा सहानुभूतिरखती थी।
- संपूर्ण यूरोप में इस समय समाजवादी-लोकतांत्रिक सरकारों के गठन की लहर चल रही थी।
- ब्रिटिश सैनिक हतोत्साहित एवं थक चुके थे तथा ब्रिटेन की आर्थिक स्थिति कमजोर हो गयी थी।
- दक्षिण-पूर्व एशिया- विशेषकर वियतनाम एवं इंडोनेशिया में इस समय साम्राज्यवाद-विरोधी वातावरण था। यहां उपनिवेशी शासन का तीव्र विरोध किया जा रहा था।
- अंग्रेज अधिकारियों को भय था कि कांग्रेस पुनः नया आंदोलन प्रारंभ करके 1942 के आंदोलन की पुनरावृति कर सकती है। सरकार का मानना था कि यह आंदोलन 1942 के आंदोलन से ज्यादा भयंकर हो सकता है क्योंकि इसमें कृषक असंतोष, संचार-व्यवस्था पर प्रहार, मजदूरों की दुर्दशा, सरकारी सेवाओं से असंतुष्ट तथा आज़ाद हिन्द फ़ौज के सैनिकों इत्यादि जैसे कारकों का गठजोड़ बन सकता है। सरकार इस बात से भी चिंतित थी कि आजाद हिंद फौज के सैनिकों का अनुभव, सरकार के विरुद्ध हमले में प्रयुक्त किया जा सकता है।
- युद्ध के समाप्त होते ही भारत में चुनावों का आयोजन तय था क्योंकि 1934 में केंद्र के लिये एवं 1937 में प्रांतों के लिये जो चुनाव हु ये थे उसके पश्चात दुबारा चुनावों का आयोजन नहीं किया गया था।

यद्यपि ब्रिटेन भारतीय उपनिवेश की खोना नहीं चाहता था लेकिन उसकी सत्तारूढ़ लेबर सरकार समस्या के शीघ्र समाधान के पक्ष में थी।

कांग्रेस का चुनाव अभियान एवं आजाद हिंद फौज पर मुकदमा

1946 में सर्दियों में चुनावों के आयोजन की घोषणा की गयी। इन चुनावों में अभियान के समय राष्ट्रवादी नेताओं के समक्ष यह उद्देश्य था कि वे न केवल वोट पाने का प्रयास

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

करें अपितु लोगों में ब्रिटिश विरोधी भावनाओं को और सशक्त बनायें।

चुनाव अभियान में राष्ट्रवादियों ने 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान सरकार की दमनकारी नीतियों की खुलकर आलोचना की। कांग्रेसी नेताओं ने शहीदों की देशभक्ति एवं त्याग की प्रशंसा तथा सरकार की आलोचना करके भारतीयों में देश प्रेम की भावना को संचारित करने का प्रयत्न किया। कांग्रेस के नेताओं ने 1942 के आंदोलन में नेतृत्वविहीन जनता के साहसी प्रतिरोध की मुक्तकंठ से प्रशंसा की। अनेक स्थानों पर शहीद स्मारक बनाये गये तथा पीड़ितों को सहायता पहुंचाने के लिये धन एकत्रित किया गया। सरकारी दमन की कहानियों को विस्तार से जनता के मध्य सुनाया जाता था, दमनकारी नीतियां अपनाने वाले की धमकी दी जाती थी।

किंतु सरकार इन गतिविधियों में रोक लगाने में असफल रही। राष्ट्रवादियों के इन कार्यों से जनता सरकार से और भयमुक्त हो गयी। उन सभी प्रांतों में कांग्रेस की सरकार की स्थापना लगभग सुनिश्चित हो गयी, जहां सरकारी, दमन ज्यादा बर्बर था। इन कारणों से सरकार परेशान हो गयी। अब सरकार कांग्रेस के साथ कोई 'सम्मानजनक समझौता' करने हेतु मजबूर सी दिखने लगी।

सरकार द्वारा आजाद हिंद फौज के सैनिकों पर मुकदमा चलाये जाने के निर्णय के विरुद्ध पूरे देश में जितनी तीव्र प्रतिक्रिया हुयी उसकी कल्पना न तो कांग्रेसी नेताओं को और न ही सरकार की थी। पूरा देश इन सैनिकों के बचाव में आगे आ गया। इससे पहले सरकार ने यह यह निर्णय लिया था कि इन सैनिकों पर मुकदमा चलाया जायेगा। कांग्रेस ने सैनिकों के बचाव हेतु **आजाद हिंद फौज बचाव समिति** का गठन किया। सैनिकों को आर्थिक सहायता देने तथा उनके लिये रोजगार की व्यवस्था करने हेतु **आजाद हिंद फौज राहत तथा जांच समिति** भी बनायी गयी।

आजाद हिंद फौज का मानसिक प्रभाव अत्यंत प्रबल था और इसका प्रत्यक्ष प्रमाण था, आजाद हिंद फौज के बंदी बनाये गये सैनिकों की रिहाई के पक्ष में जन और नेतृत्व-स्तर पर राष्ट्रीय आंदोलन। इस संदर्भ में दो साम्राज्यवादी नीतियों का सशक्त प्रभाव पड़ा। एक, तो पहले ही सरकार ने आजाद हिन्द फौज के कैदियों पर सार्वजनिक मुकदमा चलाने का निर्णय लिया, तथा दूसरा, मुकदमा नवंबर में लाल किले में एक हिन्दू **(प्रेम कुमार सहगल), एक मुसलमान (शाहनवाज खान) तथा एक सिख (गुरुबख्श सिंह ढिल्लो)** को एक ही कटघरे में खड़ा करके चलाया गया। बचाव पक्ष में **भूलाभाई देसाई और तेजबहादुर सप्रू के साथ नेहरू भी थे। काटजू एवं आसफ अली उनके सहायक थे।**

इसके अतिरिक्त वियतनाम एवं इंडोनेशिया में भी उपनिवेशी शासन की स्थापना हेतु भारतीय सेना की टुकड़ियों का प्रयोग किये जाने से ब्रिटिश विरोधी भावनायें पुख्ता हुयीं। इससे शहरी वर्ग एवं सैनिकों दोनों में असंतोष जागा।

आजाद हिंद फौज के युद्धबंदियों को कांग्रेस का समर्थन

- द्वितीय विश्व युद्ध के उपरांत 1945 में बंबई में पहली बार आयोजित हो रहे कांग्रेस के अधिवेशन में आजाद हिंद फौज के कैदियों के समर्थन में एक सशक्त प्रस्ताव पारित किया गया तथा उन्हें पूर्ण सहयोग देने की घोषणा की गयी।
- आजाद हिंद फौज के युद्धबंदियों पर चलाये जा रहे मुकदमें में भूलाभाई बचाव पक्ष की ओर से प्रस्तुत हुयेतथा इनके समर्थन में वकालत की।

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

- आजाद हिंद फौज जांच एवं राहत समिति ने युद्धबंदियों एवं उनके आश्रितों के लिये धन एवं खाद्यान्न की व्यवस्था की तथा उनके लिये रोजगार के अवसर जुटाये।
- जनता को समर्थन देने के लिये प्रेरित किया।

1945-46 की सर्दियों में विद्रोह की तीन घटनायें–

1946-56 की सर्दियों में भारतीयों की प्रखर राष्ट्रवादी भावना का उभार, अंग्रेज अधिकारियों के साथ टकराव के रूप में सामने आया। इस समय विद्रोह की तीन घटनायें हुयीं-

- **21 नवंबर 1945**- कलकत्ता में, आजाद हिंद फौज पर मुकद्दमें को लेकर।
- **11 फरवरी, 1946**– कलकत्ता में; आजाद हिंद फौज के अधिकारी राशिद अली को 7 वर्ष का कारावास सुनाए जाने को लेकर
- **18 फरवरी 1946**- बंबई में; जब रॉयल इंडियन नेवी के नाविकों ने हड़ताल कर दी।

इन तीनों विद्रोहों का रूप लगभग एक जैसा था-

विद्रोह-1

21 नवंबर, 1945: इस दिन फारवर्ड ब्लाक के छात्रों का जुलूस, कलकत्ता में सरकारी सत्ता के केंद्र **डलहौजी स्क्वायर** की ओर बढ़ा। जुलूस में छात्र फेडरेशन एवं इस्लामिया कालेज के छात्र भी सम्मिलित थे। पुलिस ने प्रदर्शनकारी छात्रों पर लाठी चार्ज किया पर वह छात्रों को तितर-बितर करने में सफल नहीं हो सकी। उल्टे छात्रों ने पुलिस पर ईट-पत्थर फैके। इसके जवाब में पुलिस ने छात्रों पर गोलियां चला दी। इस घटना में 2छात्रों की मृत्यु हो गयी तथा 52 छात्र घायल हो गये।

विद्रोह-2

11 फरवरी, 1946: विद्रोह की यह दूसरी घटना आजाद हिंद फौज के कैप्टन **अब्दुल रशीद** को सात वर्ष का कारावास दिये जाने के निर्णय से संबंधित थी। इस घटना में एक प्रतिवादी जुलूस निकाला गया, जिसका नेतृत्व मुस्लिम लीग के छात्रों ने किया। कांग्रेस एवं कम्युनिस्ट पार्टी के छात्र संगठन भी इस जुलूस में सम्मिलित हुये। पुलिस ने **धर्मतल्ला स्ट्रीट** पर कुछ प्रदर्शनकारियों को गिरफ्तार कर लिया। इससे छात्र उत्तेजित हो गये तथा विरोधस्वरूप उन्होंने डलहौजी स्क्वायर क्षेत्र में धारा 144 का उल्लंघन किया। इसके परिणामस्वरूप पुलिस ने लाठी चार्ज किया तथा कई और लोगों को बंदी बना लिया।

विद्रोह-3

18 फरवरी, 1946: रायल इंडियन नेवी (भारतीय शाही सेना) के इस विद्रोह की शुरुआत बंबई में हुयी, जब **एच.एम.आई.एस. तलवार**के 1100 नाविकों ने निम्न कारणों से हड़ताल कर दी

- नस्लवादी भेदभाव- भारतीय नाविक, अंग्रेज सैनिक के बराबर वेतन की मांग करने लगे
- अखाद्य भोजन।
- नाविक वी.सी. दत्त द्वारा एच.एम.आई. एस. तलवार की दीवारों पर भारत छोड़ो लिखने के आरोप के कारण उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया था। रायल इंडियन नेवी के नाविक उन्हें रिहा करने की मांग कर रहे थे।
- आजाद हिंद फौज पर मुकदमा।
- इंडोनेशिया में भारतीय सेना का प्रयोग तथा उसकी वापसी की मांग।

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

आंदोलनकारियों ने तिरंगे फहराये तथा जहाजी बेड़ों में जगह-जगह झंडे लगा। दिये। शीघ्र ही कैसेल और फोर्ट बैरक भी हड़ताल में शामिल हो गये। आन्दोलनकारी कांग्रेस के झंडों से सजी गाड़ियों में बैठकर पूरे बंबई में घूमने लगे। उन्होंने कुछ स्थानों पर यूरोपियों एवं पुलिसवालों को धमकाया तथा कुछ दुकानों के कांच तोड़ दिये। भारतीयों ने आंदोलनकारियों को भोजन पहुंचाया तथा दुकानदारों ने उन्हें आमंत्रित किया कि वे अपनी आवश्यकता की वस्तुयें दुकानों से निःशुल्क ले सकते हैं।

विद्रोह की तीनों घटनाओं की शक्ति तथा उनके प्रभाव का मूल्यांकन विद्रोह की ये तीनों घटनायें कई दृष्टियों से महत्वपूर्ण थीं-

- इनके द्वारा जनता के बेखौफ लड़ाकूपन की समर्थ अभिव्यक्ति हुयी।
- सशस्त्र सेनाओं के विद्रोह का जनता के मनो-मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव पड़ा तथा वह बिल्कुल निर्भीक हो गयी।
- रायल इंडियन नेवी के विद्रोह को भारतीयों ने ब्रिटिश शासन की पूर्ण समाप्ति के रूप में देखा तथा इस तिथि को वे स्वतंत्रता दिवस की तरह मानने लगे।

इन विद्रोहों ने ब्रिटिश सरकार को कुछ रियायतें देने हेतु विवश किया। जैसे-

1 दिसंबर 1946 को सरकार ने घोषणा की कि, आजाद हिंद फौज के केवल उन्हीं सैनिकों पर मुकद्दमा चलाया जायेगा, जिन पर हत्या या क्रूर अपराधों में शामिल होने का आरोप है।

- जनवरी 1947 में पहले बैच को कैद की दी गयी सजा समाप्त कर दी गयी।
- फरवरी 1947 तक हिन्द-चीन एवं इंडोनेशिया से भारतीय सैनिकों को वापस बुला लिया गया।
- एक उच्चस्तरीय संसदीय शिष्टमंडल भारत भेजने का निर्णय किया गया।

माउंटबैटन योजना, 3 जून 1947

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

प्रस्तावना

1947 के प्रारंभ में साम्प्रदायिक दंगों की आग में झुलस रहे देश तथा कांग्रेस एवं लीग के मध्य बढ़ते गतिरोध के कारण भारतीय राष्ट्रवादी विभाजन के उस दुखद एवं ऐतिहासिक निर्णय के संबंध में सोचने को विवश हो गये, जिसकी उन्होंने कभी कल्पना भी नहीं की थी। इस दौरान सबसे महत्वपूर्ण मांग बंगाल एवं पंजाब के हिन्दू एवं सिख समुदाय की ओर से उठायी गयी। इसका प्रमुख कारण यह था कि यह समुदाय समूहीकरण की अनिवार्यता के कारण इस बात से चिंतित था उसे कहीं पाकिस्तान में सम्मिलित न होना पड़े। **बंगाल में हिन्दू महासभा ने पं. बंगाल के रूप में एक पृथक हिन्दू राज्य की अवधारणा प्रस्तुत की।**

10 मार्च, 1947 को जवाहरलाल नेहरू ने कहा कि वर्तमान समस्या के समाधान का सबसे सर्वोत्तम उपाय यह है कि कैबिनेट मिशन, पंजाब एवं बंगाल का विभाजन कर दें।

अप्रैल 1947 में भारतीय कांग्रेस के अध्यक्ष जे.बी. कृपलानी ने वायसराय को लिखा कि.“युद्ध से बेहतर यह है कि हम उनकी पाकिस्तान की मांग को मान लें। किन्तु यह तभी संभव होगा जब आप पंजाब और नंगल का ईमानदारीपूर्वक विभाजन करें।”

माउंटबैटन वायसराय के रूप में: लार्ड माउंटबैटन अपने पूर्ववर्ती वायसरायों की तुलना में निर्णय लेने में ज्यादा त्वरित एवं निर्णायक सिद्ध हु ये क्योंकि उन्हें निर्णय लेने के ज्यादा एवं अनौपचारिक अधिकार प्रदान किये गये थे। साथ ही उन्हें ब्रिटिश सरकार के इस दृढ़ निर्णय से भी काफी सहायता मिली कि जितनी जल्दी हो सके भारतीयों को सत्ता हस्तांतरित कर दी जाये। उनका प्रमुख कार्य यह था कि अक्टूबर 1947 से पहले वे इस बात का पता लगायें कि भारत में एकता या विभाजन दोनों में से क्या होना है और इसके पश्चात उनका उत्तरदायित्व ब्रिटिश सरकार को इस बात से अवगत कराना है कि भारतीयों को सत्ता हस्तांतरण किस प्रकार किया जायेगा तथा उसका स्वरूप क्या होगा? मांउटबैटन के आने से पूर्व ही भारतीय परिस्थितियां निर्णायक मोड़ लेने लगी थीं, इससे भी माउंटबैटन को परिस्थितियों को समझने तथा निर्णय लेने में मदद मिली।

कैबिनेट मिशन निष्फल प्रयास के रूप में सामने आया तथा जिन्ना इस बात पर दृढ़तापूर्वक अड़े हु ये थे कि वे पाकिस्तान से कम कुछ भी स्वीकार नहीं करेंगे।

माउंटबैटन योजना, 3 जून 1947

लार्ड वैवेल के स्थान पर लार्ड माउंटबैटन के वायसराय बन कर आने के पूर्व ही भारत में विभाजन के साथ स्वतंत्रता का फार्मूला भारतीय नेताओं द्वारा लगभग स्वीकार के लिया गया था। 3 जून को माउंटबैटन ने भारत के विभाजन के साथ सत्ता हस्तांतरण की एक योजना प्रस्तुत की। इसे माउंटबैटन योजना के साथ ही **3 जून योजना** के नाम से भी जाना जाता है।

मुख्य विन्दुः माउंटबैटन योजना के मुख्य बिन्दु

निम्नानुसार थे–

- पंजाब और बंगाल में हिन्दू तथा मुसलमान बहु संख्यक जिलों के प्रांतीय विधानसभा के सदस्यों की अलग बैठक बुलाई जाये और उसमें कोई भी पक्ष यदि प्रांत का विभाजन चाहेगा तो विभाजन कर दिया जायेगा।
- विभाजन होने की दशा में दो डोमनियनों तथा दो संविधान सभाओं का निर्माण किया जायेगा।
- सिंध इस संबंध में अपना निर्णय स्वयं लेगा।
- उत्तर-पश्चिमी सीमांत प्रांत तथा असम के सिलहट जिले में जनमत संग्रह द्वारा यह पता लगाया

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

जायेगा कि वे भारत के किस भाग के साथ रहना चाहते हैं।

- योजना में कांग्रेस की भारत की एकता की मांग को अधिक से अधिक पूरा करने की कोशिश की गयी। जैसे-

1. भारतीय रजवाड़ों को स्वतंत्र रहने का विकल्प नहीं दिया जा सकता उन्हें या तो भारत में या पाकिस्तान में सम्मिलित होना होगा।
2.बंगाल को स्वतंत्रता देने से मना कर दिया गया।
3. हैदराबाद की पाकिस्तान में सम्मिलित होने की मांग को अस्वीकार कर दी गयी। (इस मांग के संबंध में माउंटबैटन ने कांग्रेस का पूर्ण समर्थन किया)।

- 15 अगस्त 1947 को भारत और पाकिस्तान को डोमिनियन स्टेट्स के आधार पर सत्ता का हस्तांतरण हो जायेगा।
- यदि विभाजन में गतिरोध उत्पन्न हुआ तो एक सीमा आयोग का गठन किया जायेगा।

माउंटबैटन योजना को कांग्रेस तथा मुस्लिम लीग दोनों ने स्वीकार कर लिया तथा भारत का भारत एवं पाकिस्तान दो डोमिनियनों में विभाजन कर दिया गया। इस योजना से जहां मुस्लिम लीग की बहु प्रतीक्षित पाकिस्तान के निर्माण की मांग पूरी हो गयी, वहीं योजना में कांग्रेस की इस मांग का भी पूरा ध्यान रखा गया कि यथासंभव पाकिस्तान का भौगोलिक क्षेत्र छोटा से छोटा हो।

भारत ने डोमिनयन का दर्जा क्यों स्वीकार कियाः

लाहौर अधिवेशन (1929) की भावना के विरुद्ध कांग्रेस ने डोमिनियन स्टेट्स का दर्जा स्वीकार किया क्योंकि-

- इससे शांतिपूर्ण एवं त्वरित सत्ता हस्तांतरण की प्रक्रिया सुनिश्चित हो गयी।
- देश की तत्कालीन विस्फोटक परिस्थितियों को नियंत्रित करने के लिये आवश्यक था कि कांग्रेस जल्द से जल्द शासन की शक्तियां प्राप्त करे।
- देश में प्रशासनिक एवं सैन्य ढांचे की निरंतरता को बनाये रखने के लिये भी यह अनिवार्य था।
- भारत द्वारा डोमिनियन स्टेट्स का दर्जा स्वीकार किये जाने से ब्रिटेन को उसे राष्ट्रमंडल में शामिल करने का अवसर मिल गया। इससे ब्रिटेन की यह चिर-प्रतीक्षित इच्छा पूरी हो गयी। यद्यपि भले ही यह अस्थायी था, परंतु ब्रिटेन को विश्वास था कि भारत के राष्ट्रमंडल में आ जाने से उसे आर्थिक सुदृढ़ता तथा रक्षात्मक शक्ति मिलेगी तथा भारत में उसके निवेश के नये द्वार खुलेंगे।

ब्रिटेन द्वारा सत्ता हस्तांतरण की तिथि (15 अगस्त 1947) समय से पूर्व ही तय कर लिये जाने का कारण

ब्रिटेन, डोमिनियन स्टेट्स के मुद्दे पर कांग्रेस की स्वीकृति चाहता था। इसके साथ ही वह उस समय हो रहे भीषण सांप्रदायिक दंगों की जिम्मेदारी से भी बचना चाहता था।

योजना यह थी कि जैसे ही डोमिनियन स्टेट्स के लिये कांग्रेस की स्वीकृति मिले, योजना को तुरंत, बिना किसी विलंब के क्रियान्वित कर दिया जाये। इस योजना के अनुसार, सीमांत प्रांत में जनमत संग्रह द्वारा यह तय होना था कि वह भारत में शामिल होगा या पाकिस्तान में इसी प्रकार असम के मुस्लिम बहु संख्यक सिल्हट जिले में भी जनमत संग्रह द्वारा यह निश्चित होना था कि वह भारत में सम्मिलित होगा या पूर्वी बंगाल में।

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

बंगाल और पंजाब की विधानसभाओं को दो भागों में, एक में मुस्लिम बहु संख्यक प्रदेश के प्रतिनिधि तथा दूसरे में शेष अन्य प्रतिनिधियों को यह निश्चित करना था कि प्रांतों का विभाजन हो या नहीं। जैसी कि उम्मीद थी दोनों प्रांतों के हिंदू बहु संख्यक प्रदेशों के प्रतिनिधियों ने यह निश्चय किया कि प्रांतों का विभाजन हो। पश्चिमी पंजाब और पूर्वी बंगाल ने यह तय किया कि वे पाकिस्तान में सम्मिलित होंगे, जबकि पश्चिमी बंगाल और पूर्वी पंजाब ने यह तय किया कि वे भारत में सम्मिलित हॉगे । सिल्हट और सीमांत प्रांत का जनमत संग्रह पाकिस्तान के पक्ष में गया। ब्लूचिस्तान एवं सिंध में जनमत ने भारी बहुमत से पाकिस्तान में सम्मिलित होने की इच्छा जतायी ।

कैबिनेट मिशन योजना,1946

प्रस्तावना

फरवरी 1946 में ब्रिटेन के प्रधानमंत्री एटली ने भारत में एक तीन सदस्यीय उच्च-स्तरीय शिष्टमंडल भेजने की घोषणा की। इस शिष्टमंडल में ब्रिटिश कैबिनेट के तीन सदस्य- **लार्ड पैथिक लारेंस (भारत सचिव), सर स्टेफर्ड क्रिप्स (व्यापार बोर्ड के अध्यक्ष) तथा ए.वी. अलेक्जेंडर (एडमिरैलिटी के प्रथम लार्ड या नौसेना मंत्री)** थे। इस मिशन को विशिष्ट अधिकार दिये गये थे तथा इसका कार्य भारत को शांतिपूर्ण सत्ता हस्तांतरण के लिये, उपायों एवं संभावनाओं को तलाशना था।

अंग्रेजों की भारत से वापसी क्यों अपरिहार्य प्रतीत होने लगी?

- सरकार-विरोधी संघर्ष में राष्ट्रवादियों की सफलता से उनकी विजय निर्णायक स्थिति में पहुंच चुकी थी।

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

राष्ट्रवाद, अब समाज के उन वर्गों और क्षेत्रों तंक पहुंचचुका था, जो कि अब तक इस प्रक्रिया से अछूते थे।

- प्रथम विश्व युद्ध से लेकर 1939 के अंत तक भारतीय सिविल सेवा में यूरोपियों की जो सर्वोच्चता स्थापित थी, वह धीरे-धीरे समाप्त हो रही थी। इसका प्रमुख कारण इन सेवाओं में भारतीयों का बढ़ता प्रतिनिधित्व तथा सेवाओं का भारतीयकरण था। इन सेवाओं के भारतीयकरण से यूरोपियों में असंतोष बढ़ने लगा तथा धीरे-धीरे उनकी रुचि इन सेवाओं के प्रति कम होने लगी। इसके साथ नौकरशाही एवं सरकार भक्त तबके में भी असंतोष बढ़ने लगा। लंबे विश्व युद्धों के कारण भारत में आर्थिक कठिनाइयां बढ़ रही थीं तथा देश धीरे-धीरे दिवालियेपन की ओर अग्रसर हो रहा था।
- अंग्रेज सरकार की समझौतावादी एवं दमनकारी नीति की अपनी कुछ सीमायें थीं। साथ ही इसमें विरोधाभास प्रकट होने लगा था। जैसे कि- क्रिप्स मिशन के उपरांत सरकार पूर्ण स्वतंत्रता को छोड़कर केवल सीमित समझौते की नीति पर ही चल रही थी।
- जब अहिंसक असहयोग आंदोलन को दबाने के लिये सरकार ने दमन का सहारा लिया तो उसका फासीवादी चेहरा अनावृत हो गया तथा जब सरकार ने आंदोलनों के विरुद्ध दमन का सहारा लेने से बचने की कोशिश की तो नौकरशाही हताश हुयी तथा सरकार की प्रतिष्ठा में भारी गिरावट आयी।
- सरकार द्वारा कांग्रेस के प्रति प्रेम दिखाये जाने से उसके भक्त असंतुष्ट हो गये।
- सरकार की इन विरोधाभासी नीतियों के कारण नौकरशाही असमंजस की स्थिति में फंस गयी, जो कि अभी तक सर्वश्रेष्ठता की भावना पाले हुये थी तथा किसी भी स्थिति में भारतीयों के समक्ष झुकने को तैयार नहीं थी। चुनावों के उपरांत विभिन्न प्रांतों में कांग्रेस सरकारों के गठन से यह स्थिति और जटिल हो गयी तथा नौकरशाही एवं राजभक्त असमंजस के दलदल में आकंठ डूब गये।
- संविधानवाद या कांग्रेस राज ने भारतीयों में जुझारूपन की प्रवृत्ति को और सशक्त बना दिया तथा राष्ट्रवादी भावनाओं के प्रसार को और तेज कर दिया।
- आजाद हिन्द फौज के युद्धबंदियों के समर्थन में पूरे राष्ट्र ने जिस अभूतपूर्व एकता का परिचय दिया उससे सरकार सकते में आ गयी। तदुपरांत रायल इंडियन नेवी के नाविकों के विद्रोह से सरकार के सम्मुख यह बात स्पष्ट हो गयी कि अब वह सेना पर भी पूर्ण विश्वास नहीं कर सकती। उसने महसूस किया कि यदि कांग्रेस ने अब कोई आंदोलन प्रारंभ किया तो उसे प्रांतीय कांग्रेसी सरकारें भी खुलकर सहयोग प्रदान करेंगी।
- तत्कालीन परिस्थितियों में भारतीयों के पूर्ण दमन का एक ही उपाय था- अंतरिम शासन व्यवस्था। किंतु अब यह व्यवस्था असंभव प्रतीत होने लगी थी क्योंकि सरकार के पास अब पर्याप्त संख्या में दक्ष अधिकारी नहीं थे।
- ब्रिटिश सरकार अब यह सोचने पर विवश हो गयी कि जन आंदोलन के भविष्य में भारत-ब्रिटिश संबंधों को अच्छा बनाये रखने का एकमात्र यही उपाय है। ब्रिटेन में भी सरकार एवं उच्च नीति-नियामक यह महसूस करने में लगे अंग्रेजों की सम्मानपूर्वक वापसी का यही एक उपाय है कि भारतीयों से समझौता कर लिया जाये तथा शांतिपूर्ण ढंग से उन्हें सत्ता सौंप दी जाये।

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

कैबिनेट मिशन योजना की पूर्व संध्या

- कैबिनेट मिशन योजना की पूर्वसंध्या पर कांग्रेस ने मांग की कि वह **एकीकृत केंद्र में ही सत्ता हस्तांतरण** की प्रक्रिया को स्वीकार करेगी। अल्पसंख्यकों की मांग के संबंध में उसकी नीति थी कि मुस्लिम बहु ल प्रांतों को आत्मनिर्णय द्वारा केंद्र में विलय होने का अधिकार है। किंतु उसने स्पष्ट किया कि यह प्रक्रिया अंग्रेजों द्वारा भारत छोड़ने के उपरांत ही पूर्ण होगी।
- ब्रिटेन की मंशा भी यही थी कि वह संयुक्त एवं मैत्रीभाव वाले भारत को सत्ता हस्तांतरित करे तथा राष्ट्रमंडल की सुरक्षा हेतु भारत को सक्रीय साझेदार बनाए क्योंकि ब्रिटेन का मानना था कि विभाजित भारत से राष्ट्रमंडल की शक्ति क्षीण होगी तथा ब्रिटिश सर्वोच्चता की उसकी नीति प्रभावित होगी।
- 1946 में ब्रिटेन की संयुक्त भारत के संबंध में स्पष्ट नीति थी, जो कि उसकी पूर्ववर्ती नीतियों से सर्वथा भिन्न थी। **15 मार्च 1946 को ब्रिटिश प्रधानमंत्री क्लीमेंट एटली ने कहा कि "……अल्पसंख्यकों की मांगे विचारणीय हैं….परंतु उन्हें बहु संख्यकोंके हितों की उपेक्षा करके पूरा नहीं किया जा सकता"।** यह घोषणा शिमला सम्मेलन में सरकार द्वारा अपनायी गयी उस घोषणा से बिल्कुल भिन्न थी, जिसमें वायसराय वैवेल ने जिन्ना को संतुष्ट करने का पूर्ण प्रयास किया था।

भारत मे कैबिनेट मिशन का आगमन

24 मार्च 1946 को कैबिनेट मिशन दिल्ली पहुं चा। मिशन ने विभिन्न दलों एवं समूहों के नेताओं से निम्न मुद्दों पर कई दौर की बातचीत की-

- अंतरिम सरकार।
- भारत की स्वतंत्रता देने एवं नये संविधान के निर्माण हेतु आवश्यक सिद्धांत एवं उपाय।

जब एकता या विभाजन के आधारभूत मुद्दे पर कांग्रेस एवं मुस्लिम लीग दोनों ने आपस में कोई सहमति नहीं हो सकी तो मिशन ने अपनी ओर से संवैधानिक समस्या के समधान हेतु मई 1946 में योजना प्रस्तुत की।

कैबिनेट मिशन योजना-मुख्य बिन्दु

1. पूर्ण पाकिस्तान के गठन की मांग अस्वीकार कर दी क्योंकि-

- पाकिस्तान के गठन से बड़ी संख्या में गैर-मुस्लिम जनसंख्या उसमें सम्मिलित हो जायेगी। जैसे- उत्तर-पश्चिम में 38 प्रतिशत जनसंख्या तथा उत्तर-पूर्व में 48 प्रतिशत जनसंख्या।
- साम्प्रदायिक आत्म-निर्णय के सिद्धांत से नयी-समस्यायें खड़ी हो सकती थीं। जैसे पश्चिमी-बंगाल में हिन्दू बहु संख्या में थे तथा पंजाब के जालंधर व अम्बाला डिवीजन में हिन्दू व सिख बहु संख्यक थे, अतः वे भी विभाजन की मांग कर सकते थे। दूसरी ओर कुछ सिख नेता पहले से ही राग अलाप रहे थे कि यदि देश का विभाजन किया गया तो वे भी पृथक राज्य की मांग उठायेंगे।
- पंजाब एवं बंगाल के विभाजन से क्षेत्रीय संधियां खतरे में पड़ सकती थीं।
- विभाजन से प्रशासनिक एवं आर्थिक समस्यायें खड़ी हो सकती थीं। जैसे कि- पाकिस्तान के पूर्वी एवं पश्चिमी भागों के मध्य सचार की समस्या।
- सशस्त्र सेनाओं का विभाजन अत्यंत खतरनाक हो सकता था।

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

- प्रातीय विधानमंडलों का तीन समूहों में विभाजन-

  समूह-कः मद्रास, बंबई, मध्य प्रांत, संयुक्त प्रांत, बिहार एवं उड़ीसा (हिन्दू बहु संख्यक प्रांत)।
  समूह-खः पंजाब, उत्तर-पश्चिमी सीमांत प्रांत एवं सिंध (मुस्लिम बहसंख्यक प्रांत)।
  समूह-गः बंगाल एवं असम (मुस्लिम बहु संख्यकप्रांत)।

2. कार्यपालिका एवं व्यवस्थापिका का त्रिस्तरीय-केन्द्रीय, प्रांतीय एवं समूह स्तरों में विभाजन।
3. संविधान सभा का निर्वाचन, प्रांत की विधानसभाओं के सदस्य तथा प्रांत की जनसंख्या के अनुपात के आधार पर आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली के द्वारा किया जायेगा। निर्वाचन मंडल में केवल तीन वर्ग माने गये- मुस्लिम, सिख और अन्य (हिन्दू सहित)। प्रस्तावित संविधान सभा में 389 सदस्य होने थे; जिनमें से 292 सदस्य भारतीय प्रांतों से, 4 मुख्य आयुक्तों के राज्यों से तथा 93 देशी रियासतों से चुने जाने थे। यह एक उपयुक्त एवं लोकतांत्रिक व्यवस्था थी, जो कि परिमाण पर आधारित नहीं थी।
4. इस संविधान सभा में- समूह क ख एवं ग तीनों के सदस्य प्रांतों का संविधान बनाने हेतु पृथक-पृथक बैठकर विचार-विमर्श करेंगे और यदि संभव हुआ तो समूहों के लिये संविधान निर्माण का भी प्रयास करेंगे। तत्पश्चात तीनों समूहों के सदस्य (अर्थात संपूर्ण संविधान सभा) एक साथ बैठकर संघीय संविधान का निर्माण करेंगे।
5. ब्रिटिश भारत और देशी रियासतों को मिलाकर एक भारतीय परिसंघ बनाया जायेगा। एकीकृत संघ-रक्षा, संचार एवं विदेशी मामलों पर नियंत्रण रखेगा। केंद्रीय व्यवस्थापिका में साम्प्रदायिक प्रश्नों का हल दोनों समुदाय के उपस्थिति एवं मत देने वाले सदस्यों के सामान्य बहु मत के आधार पर किया जायगा।
6.हर प्रांत को पृथक-पृथक कार्यपालिका और विधायिका के साथ समूह बनाने का अधिकार होगा तथा प्रत्येक समूह को अपने अधीन रखे जाने वाले प्रांतीय विषयों के संबंध में निर्णय का अधिकार होगा।
7. सत्ता हस्तांतरण के पश्चात भारतीय राज्यों से संबद्ध सर्वोच्च शक्ति न इंग्लैंड के पास रहेगी और न ही भारत के पास। भविष्य में 552 देशी रियासतों का भारत में क्या स्थान होगा, इस विषय में ये रियासतें संविधान सभा से बातचीत करेंगी और इस बीच इन रियासतों का संविधान सभा में प्रतिनिधित्व होगा।
8. केंद्रीय संविधान सभा और इंग्लैंड में सत्ता-हस्तांरण से उत्पन्न विवादों के निराकरण के लिये एक संधि के संदर्भ में बातचीत की आवश्यकता दर्शायी गयी थी।
9. सभी दलों की सहायता से एक अंतरिम सरकार की स्थापना की जायेगी, जिसमें सभी विभाग भारतीय नेताओं के पास रहेंगे।

समूह व्यवस्था के संबंध में भिन्न-भिन्न व्याख्याएं-

प्रत्येक पार्टी या समूह ने समूह व्यवस्था की अवधारणा को अपनी-अपनी दृष्टि से देखा तथा उसकी अलग-अलग व्यवस्था की-

कांग्रेस जब तक समूह व्यवस्था की अवधारणा वैकल्पिक है तब तक कैबिनेट मिशन योजना पाकिस्तान निर्माण के विरुद्ध है। एकल संविधान सभा का गठन विचारणीय है; मुस्लिम लीग का वीटो पावर समाप्त हो गया है।

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

मुस्लिम लीग अनिवार्य समूहीकरण की व्यवस्था में पाकिस्तान का निर्माण अंर्तभूत है।

कैबिनेट मिशन योजना के संबंध में मुख्य आपत्तियां

विभिन्न दलों ने भिन्न-2 आधारों पर कैबिनेट मिशन का विरोध किया-

कांग्रेस

- प्रथम आम चुनावों होने तक समूह के रूप में प्रांतों का इंतजार करना उचित व्यवस्था नहीं है। प्रांतों को यह छूट होनी चाहिए कि वे समूह में सम्मिलित हों या नहीं।
- समूहों में सम्मिलित होने की अनिवार्यता प्रांतीय स्वायत्तता के सिद्धांत के विपरीत है।
- संविधान सभा में देशी रियासतों के प्रतिनिधियों के लिये निर्वाचन की व्यवस्था न होने की बात स्वीकार नहीं की जा सकती। (विदित है कि देशी रियासतों के प्रतिनिधि राजाओं द्वारा मनोनीत किये जाने थे)।

मुस्लिम लीग

समूहीकरण की शर्त समूह ख एवं ग के लिये अनिवार्य होनी चाहिये तभी भविष्य में पाकिस्तान के निर्माण का मार्ग प्रशस्त हो सकेगा। लीग का सोचना था कि कांग्रेस, कैबिनेट मिशन योजना को अस्वीकार कर देगी तब सरकार अंतरिम सरकार के गठन के लिये लीग को आमंत्रित करेगी।

स्वीकार्यताः 6 जून को मुस्लिम लीग ने और 24 जून 1946 को कांग्रेस ने कैबिनेट मिशन योजना के दीर्घ अवधि के प्रस्तावों को स्वीकार कर लिया।

जुलाई 1946: संविधान सभा के गठन हेतु प्रांतीय व्यवस्थापिकाओं में चुनाव संपन्न हुये।

कैबिनेट मिशन के प्रस्तावों के आधार पर पहले तो भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने सरकार में भागीदारी से इंकार कर दिया पर संविधान निर्मात्री सभा में शामिल होना स्वीकार कर लिया। मुस्लिम लीग ने कैबिनेट मिशन के प्रस्ताव को आरंभ में तो स्वीकार कर लिया किंतु बाद में उससे अपनी स्वीकृति वापस ले ली। कांग्रेस द्वारा संविधान सभा में शामिल होने और मुस्लिम लीग द्वारा अपनी स्वीकृति वापस ले लेने के कारण वायसराय ने लीग के प्रतिनिधित्व के बिना ही कार्यकारिणी का गठन कर लिया। वायसराय द्वारा उठाये गये इस कदम को अनुचित बताते हुये लीग ने **16 अगस्त, 1946 को 'प्रत्यक्ष कार्यवाही दिवस'** का आह्वान किया।

2 सितम्बर 1946 को जवाहरलाल नेहरू और उनके सहकर्मियों ने वायसराय की काउंसिल के सदस्यों के रूप में शपथ ली। यह काउंसिल नेहरू के नेतृत्व में एक प्रकार से मंत्रिमंडल के रूप में काम करने लगी। नेहरू के नेतृत्व में काउंसिल के राष्ट्रसमर्थक कार्यों और कांग्रेस की शक्ति में वृद्धि को देखते हुये वायसराय लार्ड वैवेल ने घबराकर मुस्लिम लीग को काउंसिल में शामिल होने के लिये राजी कर लिया। मुस्लिम लीग को काउंसिल में शामिल करना इसलिये आपेक्षित था क्योंकि उसके बिना काउंसिल असंतुलित थी। मुस्लिम लीग ने अब भी संविधान सभा में शामिल होने से अस्वीकार कर दिया था। लेकिन जवाहरलाल नेहरू को लार्ड वैवेल ने यह सूचना दी कि मुस्लिम लीग ने काउंसिल में शामिल होना स्वीकार कर लिया है।

वैवेल के इस कार्य से मंत्रिमंडल (काउंसिल) में असहयोग का वातावरण उत्पन्न हो गया और लीग द्वारा यह घोषणा

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

कर दिये जाने पर कि उसने संविधान सभा में शामिल होने का कोई वायदा नहीं किया था, वैवेल के लिये असमंजस की स्थिति उत्पन्न हो गयी। **9 दिसम्बर, 1946 को मुस्लिम लीग के सदस्यों की अनुपस्थिति में ही डा. राजेंद्र प्रसाद की अध्यक्षता में संविधान सभा का गठन कर दिया गया।**मुस्लिम लीग ने इस संविधान सभा का विरोध किया और पृथक पाकिस्तान की मांग को और अधिक प्रखर रूप में सामने रखा।

मुस्लिम लीग की गतिरोध उत्पन्न करने की मानसिकता तथा भविष्य की रणनीति

9 दिसम्बर 1946 को आयोजित संविधान सभा की प्रथम बैठक में मुस्लिम लीग सम्मिलित नहीं हुयी। तत्पश्चात लीग की अनुपस्थिति में बैठक में जवाहरलाल नेहरू द्वारा तैयार किये गये एक मसौदे को पारित किया गया, जिसमें "एक स्वतंत्र, पूर्ण प्रभुसत्तासंपन्न गणराज्य की स्थापना का आदर्श लक्ष्य था। जिसे स्वायत्तता, अल्पसंख्यकों को पर्याप्त संरक्षण देने का अधिकार तथा सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्त होगी"।

मुस्लिम लीग ने मंत्रिमंडल द्वारा निर्णय लिये जाने के लिये आहू तकी गयी अनौपचारिक बैठक में भी भाग नहीं लिया।

मुस्लिम लीग ने कांग्रेस के सदस्यों द्वारा लिये गये निर्णय तथा नियुक्तियों पर सवाल उठाये। वित्तमंत्री के रूप में लियाकत अली खान मत्रिमंडल के अन्य मंत्रियों के कार्य में बाधक बन रहे थे।

मुस्लिम लीग का उद्देश्य किसी भी तरह पृथक पाकिस्तान का निर्माण करना था तथा उसकी समस्त गतिविधियां तथा निर्णय इसी भावना से ओत-प्रोत थीं। उसके लिये यह गृहयुद्ध जैसी प्रक्रिया थी। दूसरी ओर कांग्रेस ने सरकार से मांग की कि वह या तो मुस्लिम लीग को अंतरिम सरकार को सहयोग देने के लिये कहे या सरकार से अलग होने की कहे।

फरवरी 1947 में, मंत्रिमंडल के नौ कांग्रेस सदस्यों ने वायसराय को पत्र लिखकर मांग की कि वे लीग के सदस्यों को त्यागपत्र देने के लिये कहें अन्यथा वे मत्रिमंडल से अपना नामांकन वापस ले लेंगे। तत्पश्चात लीग द्वारा संविधान सभा को भंग करने की मांग से स्थिति और बिगड़ गयी। इस प्रकार गतिरोध सुलझने के स्थान पर और बढ़ता हु आप्रतीत होने लगा।

प्रत्यक्ष कार्यवाही दिवस 16 अगस्त, 1946

जुलाई 1946 में संविधान सभा के लिये हु ये चुनावों में कांग्रेस को शानदार सफलता मिली। इससे मुस्लिम लीग भयभीत हो गयी तथा उसने कैबिनेट मिशन योजना को ठुकरा दिया। इतना ही नहीं जिन्ना ने 'पाकिस्तान' प्राप्त करने के लिये 'प्रत्यक्ष कार्यवाही' की धमकी दी तथा 16 अगस्त 1946 का दिन 'प्रत्यक्ष कार्यवाही दिवस' के रूप में 'मनाने का निश्चय किया। इस अशुभ दिन पर देश के अनेक स्थानों में भीषण साम्प्रदायिक दंगे हु ये। अकेले कलकत्ता में 7 हजार से अधिक लोग सामूहिक कत्लेआम में मारे गये। नोआखाली, सिलहट, गढ़मुक्तेश्वर, त्रिपुरा, बिहार तथा अन्य स्थानों में भी भीषण सांप्रदायिक दंगे हु ये जिनमें हजारों लोग मौत के घाट उतार दिये गये।

एटली की घोषणा- 20 फरवरी 1947

20 फरवरी 1947 को ब्रिटेन के प्रधानमंत्री **क्लीमेंट एटली** द्वारा की गयी घोषणा के मुख्य बिंदु निम्नानुसार हैं-

- अंग्रेज सरकार 30 जून 1948 तक भारतवासियों को सत्ता सौंप देगी।

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

- यदि इस तिथि तक संविधान नहीं बन सका तो उस स्थिति में ब्रिटिश सम्राट की सरकार यह विचार करेगी कि निश्चित तिथि को ब्रिटिश शासित भारत की केंद्रीय सरकार की सत्ता किसको सौंपी जाये। क्या ब्रिटिश भारत की केंद्रीय सरकार के किसी रूप को अथवा कुछ भागों में वर्तमान प्रांतीय सरकारों को अथवा किसी अन्य ढंग से जो सर्वाधिक न्यायसंगत एवं भारतीयों के सर्वाधिक हित में हो, सत्ता दी जाये।
- लार्ड वैवेल के स्थान पर लार्ड मांउटबेटन को भारत का नया वायसराय नियुक्त किया गया।
- एटली की उपर्युक्त घोषणा में पाकिस्तान के निर्माण का भाव निहित था। साथ हिम यह घोषणा राज्यों के बल्कनीकरण एवं क्रिप्स प्रस्तावों के समर्थन का आभास दे रही थी।

सरकार ने भारतीयों की सत्ता हस्तांतरित करने के लिये तिथि निधारित क्यों की-

- सरकार को आशा थी कि सत्ता हस्तांतरण के लिये तिथि निर्धारित करने पर भारत के राजनीतिक दल मुख्य समस्या के समाधान हेतु सहमत हो जायेगें।
- सरकार तत्कालीन संवैधानिक संकट को टालना चाहती थी।
- सरकार इस बात को स्वीकार कर चुकी थी कि भारत से उसकी वापसी तथा भारतवासियों को सत्ता हस्तांतरण अपरिहार्य हो चुका है।

कांग्रेस की प्रतिक्रिया

कांग्रेस ने स्वायत्तशासी उपनिवेशों को सत्ता हस्तांतरित करने की योजना को इसलिये स्वीकार कर लिया क्योंकि इससे भारत के अधिक विखंडित होने की संभावना समाप्त हो गयी। इस योजना में प्रांतों एवं देशी रियासतों को अलग से स्वतंत्रता देने का कोई प्रावधान नहीं था। साथ ही तत्कालीन प्रांतीय व्यवस्थापिकाएं स्वयं अपने क्षेत्रों के लिए संविधान का निर्माण कर सकती थीं तथा इससे गतिरोध को समाप्त करने में मदद मिलने की उम्मीद थी।

लेकिन शीघ्र ही मुस्लिम लीग के प्रयासों से कांग्रेस की यह उम्मीद धूल-धूसरित हो गयी। लीग ने पंजाब की गठबंधन सरकार के विरुद्ध आंदोलन प्रारंभ कर दिया तथा समझौते की संभावनायें नगण्य दिखने लगीं।

शिमला सम्मलेन और वेवैल योजना

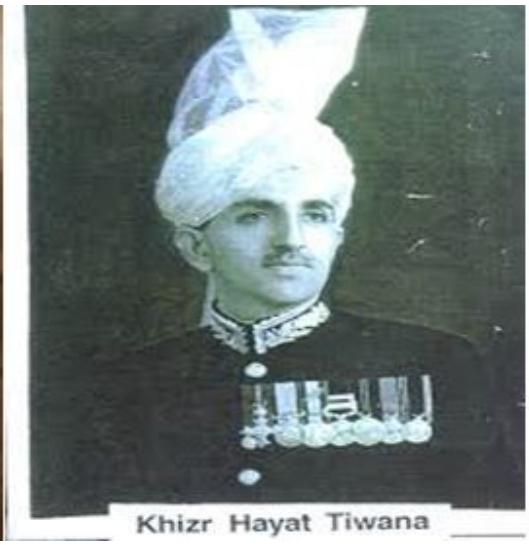

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

प्रस्तावना

यद्यपि मई 1945 में यूरोप में द्वितीय विश्व युद्ध, समाप्ति की अवस्था में पहुंच चुका था किंतु भारत पर जापान के आक्रमण का भय अभी भी बना हुआ था। ब्रिटेन में चर्चिल के नेतृत्व में रूढ़िवादी सरकार यह चाहती थी कि भारत में संवैधानिक प्रश्न की किसी भी तरह हल कर लिया जाये। इसीलिये वायसराय लार्ड वैवेल से यह कहा गया कि वो इस संबंध में भारत के नेताओं से विचार-विमर्श कर समझौते का प्रयास करें। जून 1945 में सभी कांग्रेसी नेताओं को जेल से रिहा कर दिया गया।

सरकार समस्या के समाधान हेतु क्यों तत्पर थी?

- 1945 के मध्य में इंग्लैंड में चुनाव आयोजित होने वाले थे। रूढ़िवादी यह प्रदर्शित करना चाहते थे कि वे समस्या के समधान हेतु गंभीर हैं।
- विभिन्न राष्ट्रों की ओर से ब्रिटेन पर लगातार यह दबाव डाला जा रहा था कि वो भारत का समर्थन प्राप्त करे।
- सरकार भारतीयों की ऊर्जा को ऐसी दिशा में मोड़ना चाहती थी, जहां वो अंग्रेजों के लिये लाभदायक हो सके।

योजना

सरकार की ओर से, जब तक नया संविधान न बने, वायसराय की कार्यकारिणी के पुनर्गठन का प्रस्ताव पेश किया गया। इसी उद्देश्य से वायसराय लार्ड **वैवेल ने जून 1945 में शिमला में एक सम्मेलन बुलाया**। जिसमें कांग्रेस, मुस्लिम लीग एवं अन्य लोगों ने भाग लिया। वेवल योजना के मुख्य प्रावधान **निम्नानुसार थे**-

- गवर्नर-जनरल की कार्यकारिणी के सभी सदस्य भारतीय होंगे।
- परिषद में हिन्दू एवं मुसलमानों की संख्या बराबर रखी जायेगी।
- पुर्नगठित परिषद, 1935 के अधिनियम के ढांचे के तहत अंतरिम सरकार के रूप में कार्य करेगी।
- यद्यपि गवर्नर-जनरल का निषेधाधिकार (Veto) समाप्त नहीं किया जायेगा परंतु उसका प्रयोग करना आवश्यक नहीं होगा।
- राजनीतिक दलों की एक संयुक्त सभा आहूत की जायेगी ताकि कार्यकारिणी की नियुक्ति के लिये एक सर्वसम्मत सूची प्रस्तुत की जा सके। किंतु यदि इस मसले पर आम सहमति न बन सके तो इस कार्य के लिये पृथक-पृथक सूचियां प्रस्तुत की जायें।
- इस बात की पूरी संभावना रखी गयी कि जैसे ही युद्ध में ब्रिटेन को निर्णायक विजय प्राप्त होती है, नये संविधान के निर्माण की आवश्यक प्रक्रिया प्रारंभ की जायेगी।

मुस्लिम लीग की प्रतिक्रिया

मुस्लिम लीग यह चाहती थी कि लीग को ही समस्त मुसलमानों का प्रतिनिधि माना जाए और वाइसराय की सूची में मुस्लिम लीग से बाहर का कोई मुसलमान नहीं होना चाहिये। लीग को इस बात का भय था कि अल्पसंख्यक वर्ग में- अनुसूचित जातियां, सिख और इसाइयों इत्यादि के प्रतिनिधि होने थे, जिससे प्रस्तावित कार्यकारिणी में मुसलमानों की संख्या केवल एक-तिहाई रह जायेगी। इससे भी महत्वपूर्ण बात यह थी कि पंजाब के संघवादी दल के **मलिक खिजर हयात खां** जो मुस्लिम लीग के नहीं थे, वैवेल उन्हें कार्यकारिणी में रखना चाहते थे।

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

कांग्रेस की प्रतिक्रिया

कांग्रेस ने यह कहकर वैवेल योजना का विरोध किया कि "इसका प्रयास है कि कांग्रेस की छवि विशुद्ध सवर्ण हिंदू दल की बनकर रह जाये।" इसके अतिरिक्त कांग्रेस ने यह मांग भी रखी थी उसे यह अधिकार दिया जाये कि वह अपने सदस्यों के मनोनयन में सभी संप्रदाय के सदस्यों को मनोनीत कर सके।

वेवैल की भूल

वैवेल द्वारा शिमला सम्मेलन को असफल कह कर समाप्त कर दिये जाने से मुस्लिम लीग की स्थिति मजबूत हो गयी। इससे लीग और सुदृढ़ होकर उभरी, जिसका प्रमाण 1945-1946 के चुनावों से मिल गया। वेवेल के कदम से जिन्ना की स्थिति में भी अत्यधिक सुधार आया तथा इसने ब्रिटेन की चर्चिल के नेतृत्व वाली रूढ़िवादी सरकार के मुखौटे को अनावृत कर दिया।

राजगोपालाचारी फार्मूला

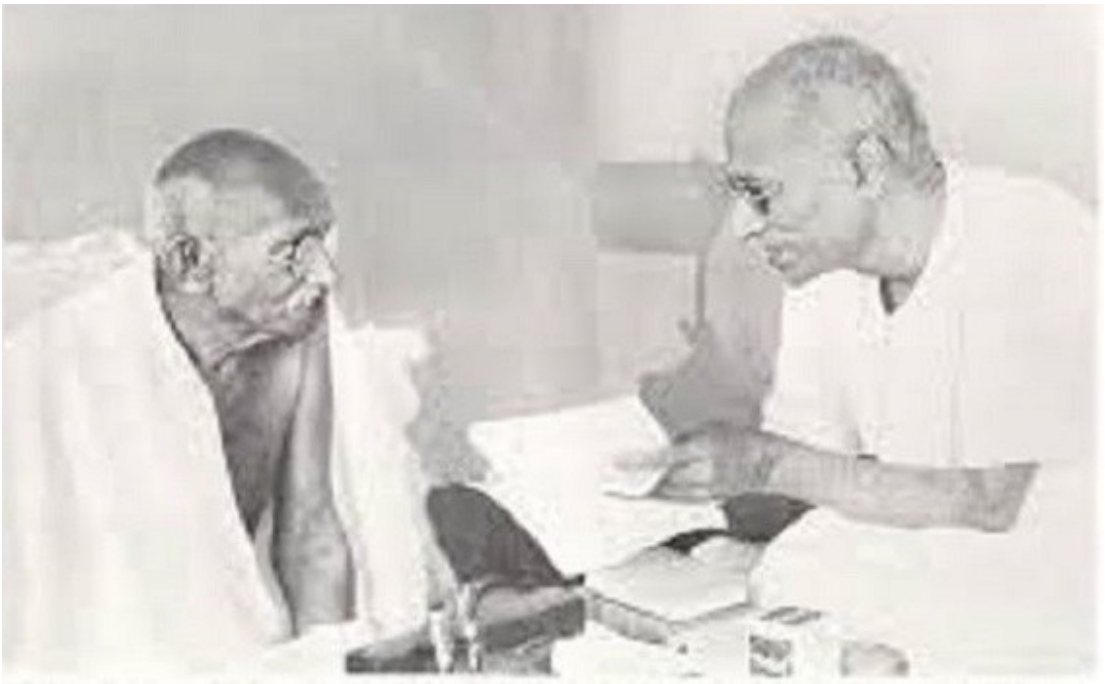

प्रस्तावना

1944 में संवैधानिक गतिरोध को हल करने के प्रयास बराबर चल रहे थे। परिप्रेक्ष्य में कुछ व्यक्तिगत प्रयास भी समस्या के समाधान हेतु किये गये। व्यल्यिगत स्तर पर गतिरोध को हल करने हेतु कुछ सुझाव दिये गये तथा प्रस्ताव पेश किए गये।

राजगोपालाचारीफार्मूला

इसी तरह का व्यक्तिगत स्तर पर एक प्रयास कांग्रेस के वरिष्ठ नेता **रोजगोपालाचारी** ने किया। राजगोपालाचारी ने कांग्रेस एवं मुस्लिम लीग के मध्य सहयोग बढ़ाने हेतु 10 जुलाई 1944 को एक फार्मूला प्रस्तुत किया, जिसे उन्हीं के नाम पर राजगोपालाचारी फार्मूले के नाम से जाना है। यह फार्मूला **अप्रत्यक्ष रूप से पृथक पाकिस्तान की अवधारणा** का ही प्रस्ताव था। गांधीजी ने इस फार्मूले का समर्थन किया। **इस फार्मूले की मुख्य विशेषताएं इस प्रकार थीं**-

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

- मुस्लिम लीग, भारतीय स्वतंत्रता की मांग का समर्थन करे।
- प्रांत में अस्थायी सरकारों की स्थापना के कार्य में मुस्लिम लीग, कांग्रेस सहायता करे।
- युद्ध की समाप्ति के पश्चात, एक कमीशन उत्तर-पूर्वी तथा उत्तर पश्चिमी भारत में उन क्षेत्रों को निर्धारित करे, जहां मुसलमान स्पष्ट बहु मत में हैं। उस क्षेत्र में जनमत सर्वेक्षण कराया जाये तथा उसके आधार पर यह तय किया जाये कि वे भारत से पृथक होना चाहते हैं या नहीं।
- देश के विभाजन की स्थिति में आवश्यक विषयों- प्रतिरक्षा, वाणिज्य, संचार तथा आवागमन इत्यादि के संबंध में दोनों के मध्य कोई संयुक्त समझौता हो जाये।
- ये बातें उसी स्थिति में स्वीकृत होगी, जब ब्रिटेन, भारत को पूरी तरह से स्वतंत्र कर देगा।

जिन्ना की आपत्तिः जिन्ना चाहते थे कि कांग्रेस द्वि-राष्ट्र सिद्धांत को स्वीकार कर ले। उन्होंने यह भी मांग की कि उत्तर-पूर्वी तथा उत्तर-पश्चिमी क्षेत्रों में केवल मुसलमानों को ही मत देने का अधिकार दिया जाये न कि पूरी जनसंख्या की। उन्होंने केंद्र में साझा सरकार के गठन के विचार का भी विरोध किया।

हालाँकि कांग्रेस, भारतीय संघ की स्वतंत्रता के लिए मुस्लिम लीग को पूर्ण सहयोग प्रदान किये जाने पर सहमत थी, लेकिन लीग ने भारतीय संघ की स्वतंत्रता की मांग पर ही केंद्रित था।

हिन्दू नेताओं जैसे **वीर सावरकर** ने राजगोपालाचारी फार्मूले की तीव्र आलोचना की।

भारत छोड़ो आंदोलन

प्रस्तावना

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

क्रिप्स मिशन के उपरांत,गाँधी जी ने एक प्रस्ताव तैयार किया जिसमे अंग्रेजों से तुरन्त भारत छोड़ने तथा जापानी आक्रमण होने पर भारतीयों से अहिंसक असहयोग का आहान किया गया था। कांग्रेस कार्यसमिति ने वर्धा की अपनी बैठक (4 जुलाई 1942) में संघर्ष के गांधीवादी प्रस्ताव को अपनी स्वीकृति दे दी।

संघर्ष के अपरिहार्य होने के कारण

संघर्ष के अपरिहार्य होने के प्रमुख कारण निम्न थे ..

- संवैधानिक गतिरोध को हल करने में क्रिप्स मिशन की असफलता ने संवैधानिक विकास के मुद्दे पर ब्रिटेन के अपरिवर्तित रुख को उजागर कर दिया तथा यह बात स्पष्ट हो गयी कि भारतीयों की ज्यादा समय तक चुप्पी उनके भविष्य को ब्रिटेन के हाथों में सौंपने के समान होगी। इससे अंग्रेजों को भारतीयों से विचार-विमर्श किये बिना उनके भविष्य निर्धारण का अधिकार मिल जायेगा।
- मूल्यों में बेतहाशा वृद्धि तथा चावल, नमक इत्यादि आवश्यक वस्तुओं के अभाव से सरकार के विरुद्ध जनता में तीव्र असंतोष था। सरकार ने बंगाल और उड़ीसा की नावों को जापानियों द्वारा दुरुपयोग किये जाने के भय से जब्त कर लिया था, जिससे स्थानीय लोगों को परेशानी का सामना करना पड़ रहा था। जापानी आक्रमण के भय से ब्रिटेन ने असम, बंगाल एवं उड़ीसा में दमनकारी एवं भेदभावपूर्ण भू-नीति का सहारा लिया।
- दक्षिण-पूर्व एशिया में ब्रिटेन की पराजय तथा शक्तिशाली ब्रिटेन के पतन के समाचार ने असंतोष की व्यक्त करने की इच्छाशक्ति भारतीयों में जगायी। ब्रिटिश शासन के स्थायित्व से लोगों की आस्था कम होने लगी तथा लोग डाकघरों एवं बैंकों से अपना रुपया वापस निकालने लगे।
- बर्मा और मलाया को खाली करने के ब्रिटिश सरकार के तौर-तरीकों से काफी असंतोष फैला। सरकार ने यूरोपीयों की बस्तियां खाली करा ली तथा स्थानीय निवासियों को उनके भाग्य के भरोसे छोड़ दिया। यहां दो तरह की सड़कें बनायी गयीं- भारतीय शरणार्थियों के लिये काली सड़क तथा यूरोपीय शरणार्थियों के लिये सफेद सड़क। ब्रिटिश सरकार की इन हरकतों से अंग्रेजों की प्रतिष्ठा को गहरा आघात लगा तथा उनकी सर्वश्रेष्ठता की मनोवृति उजागर हो गयी।
- निराशा के कारण जापानी आक्रमण का जनता द्वारा कोई प्रतिरोध न किये जाने की आशंका से राष्ट्रीय आंदोलन के नेताओं को संघर्ष प्रारम्भ करना अपरिहार्य लगने लगा।

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की बैठक- **गवालिया टैंक, बम्बई (8 अगस्त 1942)**: इस बैठक में **अंग्रेजो भारत छोड़ो** का प्रस्ताव पारित किया गया तथा घोषणा की गयी कि-

- भारत में ब्रिटिश शासन को तुरंत समाप्त किया जाये।
- घोषणा की गयी कि स्वतंत्र भारत सभी प्रकार की फासीवाद एवं साम्राज्यवादी शक्तियों से स्वयं की रक्षा करेगा तथा अपनी अक्षुणता को बनाये रखेगा।
- अंग्रेजों की वापसी के पश्चात् कुछ समय के लिये अस्थायी सरकार की स्थापना की जायेगी।
- ब्रिटिश शासन के विरुद्ध सविनय अवज्ञा आंदोलन का समर्थन किया गया।
- गांधीजी को संघर्ष का नेता घोषित किया गया।

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

विभिन्न वर्गों की गांधीजी द्वारा दिये गये निर्देशः हालांकि गांधीजी द्वारा इन निर्देशों की घोषणा कांग्रेस की ग्वालिया टैंक बैठक में ही कर दी गयी थी लेकिन उस समय उन्हें सार्वजनिक नहीं किया गया था। इनके तहत समाज के विभिन्न वर्गों की गांधीजी ने विभिन्न निर्देश दिये थे। **ये निर्देश इस प्रकार थे**-

- **सरकारी सेवकः** त्यागपत्र नहीं दें लेकिन कांग्रेस से अपनी राजभक्ति घोषित कर दें।
- **सैनिकः** सेना से त्यागपत्र नहीं दें किंतु अपने सहयोगियों एवं भारतीयों पर गोली नहीं चलायें।
- **छात्रः** यदि आत्म-विश्वास की भावना हो तो, शिक्षण संस्थाओं में जाना बंद कर दें तथा पढ़ाई छोड़ दें।
- **कृषकः** यदि जमींदार सरकार विरोधी हों तो पारस्परिक सहमति के आधार पर तय किया गया लगान अदा करते रहें किंतु यदि जमींदार सरकार समर्थक हो तो लगान अदा करना बंद कर दें।
- **राजे-महाराजेः** जनता को सहयोग करें तथा अपनी प्रजा की संप्रभुता को स्वीकार करें।
- **देशी रियासतों के लोगः** शासकों का सहयोग तभी करें जब वे सरकार विरोधी हों तथा सभी स्वयं को राष्ट्र का एक अंग घोषित करें।

इस अवसर पर गांधी जी ने लोगों से कहा था "एक मंत्र है, छोटा सा मंत्र, जो मैं आपको देता हूं। उसे आप अपने हृदय में अंकित कर सकते हैं और प्रत्येक सांस द्वारा व्यक्त कर सकते हैं। यह मंत्र है: **"करो या मरो।"** या तो हम भारत की आजाद कराएगें या इस प्रयास में अपनी जान दे देंगे; अपनी गुलामी का स्थायित्व देखने के लिये हम जिन्दा नहीं रहेंगे"।

आंदोलन का प्रसार

गांधी जी सविनय अवज्ञा आदोलन, सांगठनिक कार्यों तथा लगातार प्रचार अभियान से आंदोलन का वातावरण निर्मित कर चुके थे। लेकिन सरकार न तो कांग्रेस से किसी तरह के समझौते के पक्ष में थी न ही वह आंदोलन के औपचारिक शुभारंभ की प्रतीक्षा कर सकती थी। फलतः उसने गिरफ्तारी और दमन के निर्देश जारी कर दिये। 9 अगस्त को प्रातः ही सभी महत्वपूर्ण कांग्रेसी नेताओं को बंदी बना लिया गया तथा अज्ञात स्थानों पर ले जाया गया। इन शीर्षस्थ नेताओं की गिरफ्तारी से आंदोलन की बागडोर युवा में उग्रवादी तत्वों के हाथों में आ गयी।

जन विद्रोह

- जनता ने सरकारी सत्ता के प्रतीकों पर आक्रमण किया तथा सरकारी भवनों पर बलपूर्वक तिरंगा फहराया।
- सत्याग्रहियों ने गिरफ्तारियां दी, पुल उड़ा दिये गये, रेलों की पटरियां उखाड़ दी गयीं तथा तार एवं टेलीफोन की लाइनें काट दी गयीं।
- शिक्षण संस्थाओं में छात्रों ने हड़ताल कर दी, छात्रों द्वारा जुलूस निकाले गये, उन्होंने गैरकानूनी पचे लिखे, जगह-जगह उन्हें बांटने लगे तथा भूमिगत कार्यकर्ताओं के लिये संदेशवाहक का कार्य किया।
- अहमदाबाद, बम्बई, जमशेदपुर, अहमदनगर एवं पूना में मजदूरों ने हड़ताल कर दी।

भूमिगत गतिविधियां

भूमिगत गतिविधियों के संचालन का कार्य मुख्यतः **समाजवादी, फारवर्ड ब्लाक के सदस्य, गांधी आश्रम के अनुयायी तथा क्रांतिकारी आतंकवादियों** के हाथों

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

में रहा। बंबई, पूना, सतारा, बड़ौदा तथा गुजरात के अन्य भाग, कर्नाटक, आन्ध्र, सयुंक्त प्रांत, बिहार एवं दिल्ली इन गतिविधियों के मुख्य केंद्र थे। **राममनोहर लोहिया, जयप्रकाश नारायण, अरुणा आसफ अली, उषा मेहता, बीजू पटनायक, छोटू भाई पुराणिक, अच्युत पर्वधन, सुचेता कृपलानी तथा आर.पी. गोयनका भूमिगत गतिविधियां संचालित करने वाले अग्रगण्य नेताओं में से थे।**

उषा मेहता ने बम्बई में भूमिगत रेडियो स्टेशन की स्थापना की। भूमिगत गतिविधियों में संलग्न लोगों को व्यापक सहयोग मिल रहा था। उन्हें बड़ी मात्रा में हथियार और गोला-बारूद दिया गया। इन आंदोलनकारियों का मुख्य उद्देश्य यह होता था कि सरकारी भवनों, संचार तथा यातायात के माध्यमों तथा अन्य सरकारी प्रतिष्ठानों पर हमले किये जायें तथा जो व्यक्ति सरकार के समर्थक हैं या सरकार के लिये जासूसी करते हैं, उन्हें मौत के घाट उतार दिया जाये।

समानांतर सरकारें

भारत छोड़ो आंदोलन की एक महत्वपूर्ण विशेषता थी, देश के कई स्थानों में समानांतर सरकारों की स्थापनाः

- **बलिया** (अगस्त 1942 में, केवल एक सप्ताह के लिये)- यहां चित्तू पांडे के नेतृत्व में समांनातर सरकार की स्थापना की गयी। उनकी सरकार ने स्थानीय जिलाधिदारी से शासन के सभी अधिकार छीन लिये तथा जेल में बंद सभी कांग्रेस नेताओं की रिहा कर दिया।
- **तामलुक** (मिदनापुर, दिसम्बर 1942 से सितम्बर 1944 तक)- यहां की जातीय सरकार ने तूफान पीड़ितों के लिए सहायता कार्यक्रम प्रारंभ किए, स्कूलों को अनुदान दिये, धनी लोगों का अतिरिक्त धन गरीबों में बांटा तथा एक सशस्त्र विद्युत वाहिनी का गठन किया।
- **सतारा** (1943 के मध्य से 1945 तक)- यह सबसे लंबे समय तक चलने वाली सरकार थी। यहां प्रति सरकार के नाम से समानांतर सरकार स्थापित की गयी। सरकार की स्थापना में वाई.बी. चव्हाण तथा नाना पाटिल इत्यादि की प्रमुख भूमिका थी। सरकार के कार्यों में ग्रामीण पुस्तकालयों की स्थापना, न्यायदान मंडलों (जन अदालतों) का गठन, शराब बंदी अभियान तथा गांधी विवाहों का आयोजन जैसे कार्य सम्मिलित थे।

भारत छोड़ो आंदोलन में आम जनता ने आंदोलनकारियों को अभूतपूर्व सहयोग प्रदान किया। समाज का कोई भी वर्ग सहायता एवं समर्थन देने में पीछे नहीं रहा। उद्योगपतियों (अनुदान, प्रश्रय एवं अन्य वस्तुओं के रूप में सहयोग), छात्रों (संदेशवाहक के रूप में सहयोग), सामान्य ग्रामीणों (सरकारी अधिकारियों को आंदोलनकारियों के संबंध में सूचनायें देने से इंकार), ट्रेन चालकों (ट्रेन में बम एवं अन्य आवश्यक वस्तुयें ले जाकर) तथा पुलिस एवं सरकारी अधिकारियों सभी ने आंदोलनकारियों को पूर्ण सहयोग प्रदान किया।

आंदोलन में जनता की भागेदारी

भारत छोड़ो आंदोलन में जनता की भागेदारी कई स्तरों पर थी-

- **युवक** मुख्य रूप से स्कूल एवं कालेज के छात्रों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभायी।
- **महिलायें** मुख्यतः स्कूल एवं कालेज की छात्राओं ने आंदोलन में सक्रियता से भाग लिया। अन्य महिलाओं में अरुणा आसफ अली, सुचेता कृपलानी तथा उषा मेहता के नाम प्रमुख हैं।

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

- **किसान** पूरे देश के किसान इस आंदोलन की जान थे। किसान चाहे अमीर हो या गरीब, सभी ने आंदोलन में ऐतिहासिक भागेदारी निभायी। यहां तक कि कुछ जमींदारों ने भी आंदोलन में भाग लिया। विशेषकर दरभंगा के राजा, जो काफी बड़े जमींदार भी थे। किसानों ने केवल ब्रिटिश सत्ता के प्रतीकों को ही अपना निशाना (मिदनापुर), बिहार, महाराष्ट्र (सतारा), आंध्र, गुजरात, केरल तथा यू.पी. किसानों की गतिविधियों के प्रमुख केंद्र थे। सरकारी अधिकारी विशेष रूप से प्रशासन एवं पुलिस के निचले तबके से सम्बद्ध अधिकारी। इन्होंने भी आंदोलन में महत्वपूर्ण सहयोग दिया, फलतः इस तबके के सरकारी अधिकारियों से सरकार का विश्वास समाप्त हो गया।
- **मुस्लमान** इन्होंने भूमिगत आंदोलनकारियों को प्रश्रय प्रदान किया। आंदोलन के दौरान साम्प्रदायिक हिंसा का नामो-निशान नहीं था।
- **कम्युनिस्ट** यद्यपि इनका निर्णय आंदोलन का बहिष्कार करना था फिर भी स्थानीय स्तर पर सैकड़ों कम्युनिस्टों ने आंदोलन में भाग लिया।
- **देशी रियासर्ते** इनका सहयोग सामान्य था।

सरकारी दमन

आन्दोलनकारियों के विरुद्ध सरकार ने दमन की नीति का सहारा लिया तथा वह आन्दोलन को पूर्णरूपेण कुचल देने पर उतर आयी। यद्यपि मार्शल लॉ नहीं लागू किया गया था किंतु सरकार की दमनात्मक कार्रवाई अत्यंत गंभीर थी। प्रदर्शनकारियों पर निर्दयतापूर्वक लाठी चार्ज किया गया, आंसू गैस के गोले छोड़े गये तथा गोलियां बरसायी गयीं। अनुमानतः 10 हजार लोग मारे गये।

सरकार ने प्रेस पर हमला बोल दिया तथा कई समाचार-पत्रों पर पाबंदी लगा दी गयी। सेना ने कई शहरों को अपने नियंत्रण में ले लिया तथा पुलिस एवं गुप्तचर सेवाओं का साम्राज्य कायम हो गया। विद्रोही गांवों पर भारी जुर्माने लगाये गये तथा लोगों को सार्वजनिक रूप से कोड़े लगाये गये।

मूल्यांकन

- भारत छोड़ो आंदोलन के मुख्य केंद्र थे- पूर्वी उत्तर प्रदेश, बिहार, मिदनापुर, महाराष्ट्र एवं कर्नाटक।
- छात्र, मजदूर एवं कृषक आंदोलन की रीढ़ थे, जबकि उच्च वर्ग एवं नौकरशाही आंदोलन में तटस्थ बनी रही।
- सरकार के प्रति निष्ठा रखने वाले तत्वों को आंदोलनकारियों ने देशद्रोही माना। आंदोलन से यह स्पष्ट हो गया कि भारतीयों में राष्ट्रवाद की भावना काफी गहराई तक घर कर चुकी है।
- आंदोलन से यह बात स्पष्ट हो गयी कि भारतीयों की इच्छा के विरुद्ध भारत पर अब और अधिक शासन करना संभव नहीं है।
- पूर्ववर्ती आंदोलनों की तुलना में इस आंदोलन में स्वतः स्फूर्तता का तत्व कहीं ज्यादा था। यद्यपि असहयोग आंदोलन तथा सविनय अवज्ञा आदोलन (दोनों चरण) में भी कांग्रेस ने स्वतःस्फूर्त तत्वों के विकास की संभावनाओं को अवसर प्रदान किया था किंतु 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन में यह तत्व तुलनात्मक रूप से काफी अधिक था। वस्तुतः गांधीवादी जनआंदोलन की रणनीति यह थी कि शीर्ष नेतृत्व कार्यक्रम की योजना बना देता था तथा उसका कार्यान्वयन जनता तथा स्थानीय स्तर के कार्यकर्ताओं के हाथों में छोड़ दिया जाता था। यद्यपि

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

नेतृत्व को आंदोलन छेड़ने का अवसर न मिल पाने के कारण भारत छोड़ो आंदोलन की रूपरेखा स्पष्ट नहीं की गयी थी किंतु एक बार जब कांग्रेस नेतृत्व एवं गांधीजी ने आंदोलन को परिभाषित कर दिया, सभी लोग उत्प्रेरित होकर आंदोलन से जुड़ गये। इसके अतिरिक्त कांग्रेस भी सैद्धांतिक, राजनीतिक एवं संगठनात्मक तौर पर काफी लंबे समय से इस संघर्ष की तैयारी कर रही थी।

- भारत छोड़ो आंदोलन की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता यह थी कि स्वतंत्रता संघर्ष के एजेंडे में भारत को तुरंत आजादी दिये जाने की मांग को सम्मिलित किया गया था। इस आंदोलन के पश्चात कांग्रेस का नेतृत्व तथा भारतीय, इस मांग के संदर्भ में कभी नरम नहीं पड़े।
- इस आंदोलन में जनसामान्य की भागेदारी अप्रत्याशित थी। लोगों ने अदम्य साहस एवं राष्ट्रभक्ति का परिचय दिया। यद्यपि उन्होंने जो प्रताड़ना सही वह अत्यंत बर्बर एवं अमानवीय थी तथा संघर्ष की परिस्थितियां भी उनके प्रतिकूल थीं। किंतु आंदोलन के हर मोर्चे पर जनता ने अत्यंत सराहनीय भूमिका निभायी तथा आन्दोलनकारियों को पूर्ण समर्थन एवं सहयोग प्रदान किया।

क्रिप्स मिशन

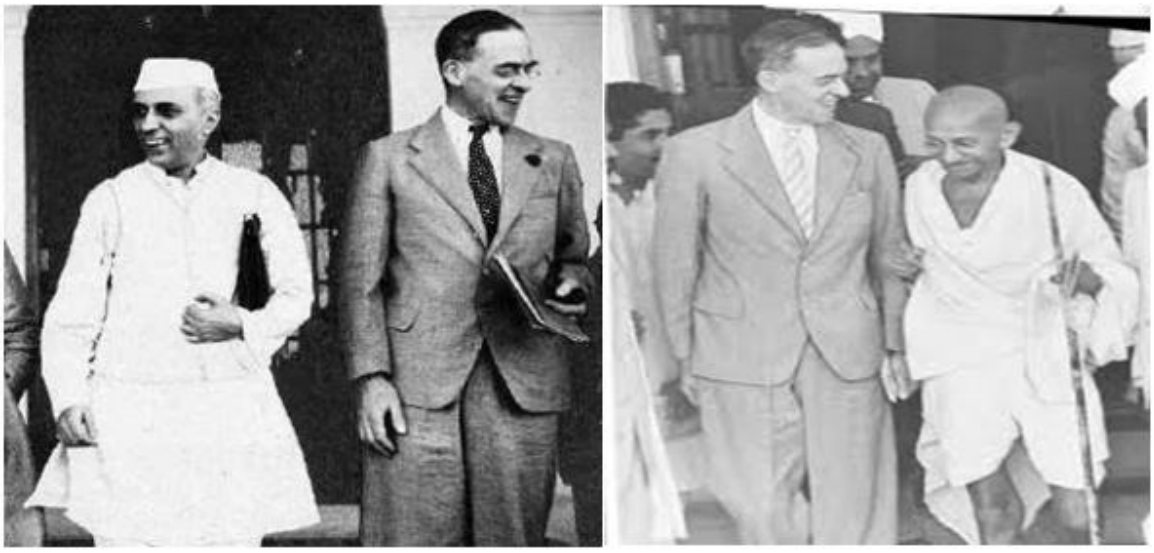

प्रस्तावना

भारत के राजनीतिक गतिरोध को दूर करने के उद्देश्य से ब्रिटिश प्रधानमंत्री चर्चिल ने ब्रिटिश संसद सदस्य तथा मजदूर नेता **सर स्टेफर्ड क्रिप्स** के नेतृत्व में मार्च 1942 में एक मिशन भारत भेजा। हालांकि इस मिशन का वास्तविक उद्देश्य, युद्ध में भारतीयों को सहयोग प्रदान करने हेतु उन्हें फुसलाना था। सर क्रिप्स, ब्रिटिश युद्ध मंत्रिमंडल के सदस्य भी थे तथा उन्होंने भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन का सक्रियता से समर्थन किया।

क्रिप्स मिशन को भारत भेजने के कारण ?

- जहां एक ओर दक्षिण-पूरव एशिया में ब्रिटेन को करारी हार का सामना करना पड़ा, वहीं दूसरी ओर भारत पर जापान के आक्रमण का भय दिनों-दिन बढ़ता जा रहा था।

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

इन परिस्थितियों में ब्रिटेन को भारत से समर्थन की कोई उम्मीद नहीं दिखाई दे रही थी।

- ब्रिटेन पर मित्र राष्ट्रों (अमेरिका, सोवियत संघ एवं चीन) की ओर से यह दबाव डाला जा रहा था कि वो भारत का समर्थन प्राप्त करे।
- भारतीयों ने इस शर्त पर मित्र राष्ट्रों को समर्थन देना स्वीकार कर लिया था कि भारत को ठोस उत्तरदायी शासन का त्वरित हस्तांतरण कर दिया जाये तथा युद्धोपरांत भारत को पूर्ण आजादी देने का वचन दिया जाये।

क्रिप्स मिशन के मुख्य प्रावधान

क्रिप्स मिशन के मुख्य प्रावधान निम्नानुसार थे-

- डोमिनियन राज्य के दर्जे के साथ एक भारतीय संघ की स्थापना की जायेगी; यह संघ राष्ट्रमंडल के साथ अपने संबंधों के निर्धारण में स्वतंत्र होगा तथा संयुक्त राष्ट्र संघ एवं अन्य अंतरराष्ट्रीय निकायों एवं संस्थाओं में अपनी भूमिका को खुद ही निर्धारित करेगा।
- युद्ध की समाप्ति के पश्चात् नये संविधान निर्माण हेतु संविधान निर्मात्री परिषद का गठन किया जायेगा। इसके कुछ सदस्य प्रांतीय विधायिकाओं द्वारा निर्वाचित किये जायेंगे तथा कुछ (रियासतों का प्रतिनिधित्व करने के लिये) राजाओं द्वारा मनोनीत किये जायेंगे।
- ब्रिटिश सरकार, संविधान निर्मात्री परिषद द्वारा बनाये गये नये संविधान को अग्रलिखित शर्तों के अधीन स्वीकार करेगा-

(i) संविधान निर्मात्री परिषद द्वारा निर्मित संविधान जिन प्रांतों को स्वीकार नहीं होगा वे भारतीय संघ से पृथक होने के अधिकारी होंगें। पृथक होने वाले प्रान्तों को अपना पृथक संविधान बनाने का अधिकार होगा। देशी रियासतों को भी इसी प्रकार का अधिकार होगा; तथा

(ii) नवगठित संविधान निमत्रिी परिषद तथा ब्रिटिश सरकार सत्ता के हस्तांतरण तथा प्रजातीय तथा धार्मिक अल्पसंख्यकों के हितों की रक्षा के मुद्दे को आपसी समझौते द्वारा हल करेंगे।

- उक्त व्यवस्था होने तक भारत के सुरक्षा संबंधी दायित्वों का निर्वहन ब्रिटेन करेगा; देश की सुरक्षा का नियंत्रण एवं निर्देशन करेगा; तथा गवर्नर-जनरल की समस्त शक्तियां पूर्ववत् बनी रहेंगी।

क्रिप्स मिशन के प्रस्ताव इसके पूर्ववर्ती प्रस्तावों से अनेक अर्थों में भिन्न थे-

- संविधान के निर्माण का अधिकार अब वास्तविक तौर पर भारतीयों के हाथों में था।
- संविधान निर्मात्री सभा के गठन हेतु एक ठोस योजना बनायी गयी थी।
- प्रांतों को अपना पृथक संविधान बनाने का विकल्प दिया गया था। यह व्यवस्था, अप्रत्यक्ष रूप से भारत का विभाजन सुनिश्चित करती थी।
- स्वतंत्र भारत के लिये यह अधिकार सुनिश्चित किया गया था कि उसे राष्ट्रमंडल से पृथक होने का अधिकार होगा।
- भारतीयों को प्रशासन में भागीदारी का भरपूर अवसर प्रदान किया जाना सुनिश्चित किया गया था।

क्रिप्स मिशन की असफलता के कारण

क्रिप्स मिशन के प्रस्ताव भारतीय राष्ट्रवादियों को संतुष्ट करने में असफल रहे तथा साधारण तौर पर भारतीयों के किसी भी वर्ग की सहमति नहीं प्राप्त कर सके। विभिन्न दलों तथा समूहों ने अलग-अलग आधार पर इन प्रस्तावों का विरोध किया।

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

कांग्रेस ने निम्न आधार पर प्रस्तावों का विरोध किया-

- भारत को पूर्ण स्वतंत्रता के स्थान पर डोमिनियन स्टेट्स का दर्जा दिये जाने की व्यवस्था।
- देशी रियासतों के प्रतिनिधियों के लिये निर्वाचन के स्थान पर मनोनयन की व्यवस्था।
- प्रांतों को भारतीय संघ से पृथक होने तथा पृथक संविधान बनाने की व्यवस्था, जो कि राष्ट्रीय एकता के सिद्धांत के विरुद्ध था।
- सत्ता के त्वरित हस्तांतरण की योजना का अभाव तथा प्रतिरक्षा के मुद्दे पर वास्तविक भागीदारी की व्यवस्था का न होना; गवर्नर जनरल की सर्वोच्चता पूर्ववत थी; तथा गवर्नर-जनरल को केवल संवैधानिक प्रमुख बनाने की मांग को स्वीकार न किया जाना।
- कांग्रेस की ओर से **जवाहरलाल नेहरु तथा मौलाना अब्दुल कलाम आज़ाद** को क्रिप्स मिशन के संदर्भ में परीक्षण एवं विचार विमर्श हेतु अधिकृत किया था।

मुस्लिम लीग ने भी क्रिप्स मिशन के प्रस्तावों को अस्वीकार कर दिया तथा इसके लिये निम्न तर्क दिये-

- एकल भारतीय संघ की व्यवस्था का होना उसे स्वीकार्य नहीं था।
- संविधान निर्मात्री परिषद के गठन का जो आधार सुनिश्चित किया था वह उसे स्वीकार्य नहीं था तथा प्रांतों के संघ से पृथक होने तथा अपना पृथक संविधान बनाने की जो विधि निर्धारित की गयी थी, उससे भी लीग असहमत थी।
- प्रस्तावों में मुसलमानों के आत्म-निर्धारण के सिद्धांत तथा पृथक पाकिस्तान की मांग को नहीं स्वीकार किया गया था।

अन्य दलों ने भी प्रांतों को संघ से पृथक होने का अधिकार दिये जाने का विरोध किया। उदारवादियों का मानना था कि प्रांतों को संघ से पृथक होने का विकल्प देना भारत की एकता एवं सुरक्षा के विरुद्ध है। हिन्दू महासभा ने भी इस प्रावधान की आलोचना की। दलितों ने अनुमान लगाया कि विभाजन के पश्चात् उन्हें बहु संख्यक हिन्दुओं की कृपा पर जीना पड़ेगा। सिक्खों का विरोध इस बात पर था कि विभाजन होने पर पंजाब उनसे छिन जायेगा।

क्रिप्स मिशन के असफलता के कारण

- अंग्रेजों ने कहा कि यह योजना 1940 के अगस्त प्रस्तावों का ही एक रुप है, जिसे अधिक स्पष्ट किया गया हो इसका उद्देश्य उस पुराने प्रस्ताव का अतिक्रमण करना नहीं है। अंग्रेजों की इस घोषणा से सरकार के प्रति शंका और बढ़ गयी।
- क्रिप्स द्वारा प्रस्तावों से आगे आकर भारतीयों का विश्वास जीतने की असफलता तथा उनका यह कहना कि "इसे स्वीकार करो या छोड़ दो" गतिरोध के सबसे प्रमुख कारण थे। प्रारम्भ में क्रिप्स ने "मंत्रिमंडल के गठन" तथा "राष्ट्रीय सरकार" की स्थापना की बात कही, किन्तु बाद में वे अपनी बातों से मुकर गये तथा कहने लगे कि उनका आशय केवल कार्यकारिणी परिषद् के विस्तार से था।
- प्रांतों के विलय या पृथक होने की व्यवस्था का प्रावधान अस्पष्ट था। संघ से पृथक होने के प्रस्ताव का विधानमंडल में 60 प्रतिशत सदस्यों द्वारा अनुमोदन किया जाना आवश्यक था। यदि इस प्रस्ताव का 60 प्रतिशत से कम सदस्य समर्थन करेंगे

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

तब इसे प्रांत के वयस्क पुरुषों के सामान्य बहु मत से पारित होना आवश्यक होगा। यह व्यवस्था विशेष रूप से पंजाब एवं बंगाल के हिन्दुओं के लिये हानिकारक थी, भले ही वे भारतीय संघ में शामिल होना चाहते थे।

- मिशन के प्रस्तावों में यह भी अस्पष्ट था कि सत्ता के हस्तांतरण संबंधी प्रावधानों को कौन लागु करेगा तथा कौन इनकी व्याख्या करेगा।
- ब्रिटिश सरकार की वास्तविक मंशा यह थी कि क्रिप्स मिशन सफल न हो। क्योंकि वह भारतीयों को सत्ता के हस्तांतरण तथा देश की प्रतिरक्षा संबंधी जिम्मेदारी में भागीदारी, दोनों के विरुद्ध थी। उधर, चर्चिल (ब्रिटिश प्रधानमंत्री), एमरी (विदेश मंत्री), लिनलिथगो (वायसराय) तथा वेवेल (कमांडर-इन-चीफ) भी नहीं चाहते थे कि क्रिप्स मिशन सफल हो।

वायसराय के वीटो (निषेधाधिकार) के मुद्दे पर स्टेफर्ड क्रिप्स तथा कांग्रेस के नेताओं के मध्य बातचीत टूट गयी।

गांधीजी ने क्रिप्स प्रस्तावों पर टिप्पणी करते हु ये कहा कि **"यह आगे की तारीख का चेक था, जिसका बैंक नष्ट होने वाला था"** (It was post-dated cheque on a crashing Bank) । जवाहरलाल नेहरू ने क्रिप्स प्रस्तावों के संबंध में कहा कि "क्रिप्स योजना को स्वीकार करना भारत को अनिश्चित खण्डों में विभाजित करने के लिये मार्ग प्रशस्त करना था।"

व्यक्तिगत सत्याग्रह

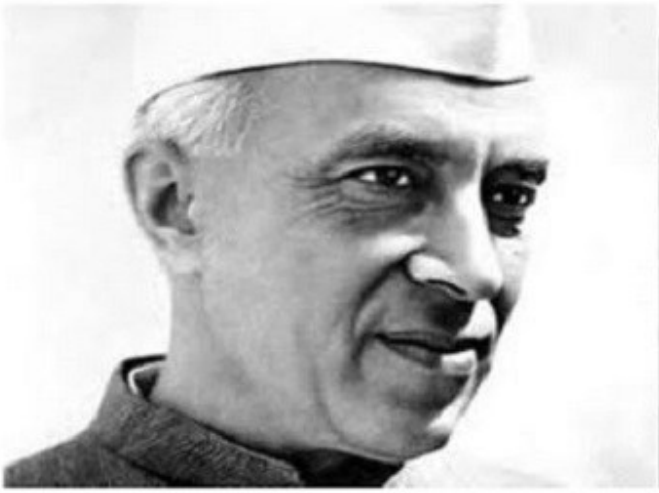

प्रस्तावना

अगस्त प्रस्ताव के बाद की परिस्थितियों में जो प्रगति हु यी उसके पश्चात् सरकार ने अड़ियल रवैया अपना लिया तथा घोषित किया कि कांग्रेस जब तक मुस्लिम नेताओं के साथ किसी तरह के समझौते को मूर्तरूप नहीं देती, तब तक भारत में किसी प्रकार का संवैधानिक सुधार संभव नहीं है। सरकार एक के बाद एक अध्यादेश जारी करती जा रही थी तथा **अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, प्रेस की स्वतंत्रता तथा सभा करने एवं संगठन बनाने का अधिकार** जैसे अधिकार धड़ाधड़ छीन रही थी। 1940 के अंत में कांग्रेस ने एक बार पुनः गांधीजी से कमान संभालने का आग्रह किया।

इसके पश्चात् गांधीजी ने ऐसे कदम उठाने प्रारंभ कर दिए जिससे उनकी व्यापक रणनीति के अंतर्गत जनसंघर्ष की भूमिका का निर्माण होता। उन्होंने **व्यक्तिगत आधार पर**

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

सीमित सत्याग्रह प्रारम्भ करने का निश्चय किया। इस रणनीति के तहत उन्होंने तय किया कि हर इलाके में कुछ चुने हु येलोग व्यक्तिगत सत्याग्रह प्रारम्भ करेंगे।

गांधीजी द्वारा व्यक्तिगत सत्याग्रह प्रारम्भ करने के मुख्य लक्ष्य थे-

- यह प्रदर्शित करना कि राष्ट्रवादियों के धैर्य का अर्थ उनकी दुर्बलता नहीं लगाया जाना चाहिये।
- यह व्यक्त करना कि भारत के लोग युद्ध के पक्षधर नहीं हैं तथा न ही वे नाजीवाद एवं भारत के साम्राज्यवादी शासन में कोई फर्क समझते हैं।
- कांग्रेस की मांगों को शांतिपूर्वक स्वीकार करने के लिए सरकार को एक और मौका देना।

सत्याग्रहियों की मांग

सत्याग्रहियों की मांग यह होगी कि युद्ध एवं युद्ध में भाग लेने के खिलाफ प्रचार करने के लिये अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता होनी चाहिये। यदि सत्याग्रहियों को गिरफ्तार नहीं किया गया तो वे युद्ध- विरोधी भाषण को दुहरायेंगे तथा गांवों की ओर प्रस्थान करेंगे। तत्पश्चात् गांवों में ये अपना संदेश फैलाते हु ये दिल्ली की ओर मार्च करने का प्रयास करेंगे। इसी नीति के कारण ही इस आंदोलन का नाम **"दिल्ली चलो आंदोलन"** पड़ गया।

17 अक्टूबर 1940 को विनोबा भावे पहले सत्याग्रही बने और इसके बाद जवाहरलाल नेहरू दूसरे। मई 1941 तक लगभग 25 हजार सत्याग्रहियों को सविनय अवज्ञा के लिये सरकार द्वारा दडित किया जा चुका था।

दिसम्बर 1941 में कांग्रेस के नेताओं को रिहा कर दिया गया। ये नेता भारतीय सीमाओं की रक्षा करने तथा मित्र राष्ट्रों की सहायता करने को आतुर थे। कांग्रेस कार्यसमिति ने महात्मा गांधी तथा नेहरूजी की आपत्तियों को दरकिनार करते हु ये एक प्रस्ताव पारित किया, जिसमें भारत की रक्षा के लिये सरकार को इस शर्त पर सहयोग देने की पेशकश की गई कि यदि-

- युद्ध के पश्चात् भारत को पूर्ण स्वतंत्रता प्रदान की जायेगी तथा
- ब्रिटेन, तुरंत ठोस रूप में सत्ता के हस्तांतरण पर राजी हो जाये।

अगस्त प्रस्ताव, 1940

प्रस्तावना

द्वितीय विश्वयुद्ध में हिटलर की असाधारण सफलता तथा बेल्जियम, हालैंड एवं फ्रांस के पतन के पश्चात् ब्रिटेन की स्थिति अत्यन्त नाजुक हो गयी, फलतः ब्रिटेन ने समझौतावादी दृष्टिकोण की नीति अपनायी। **युद्ध में भारतीयों का सहयोग प्राप्त करने के उद्देश्य से 8 अगस्त 1940 को वायसराय लिनलिथगो ने एक घोषणा की, जिसे अगस्त प्रस्ताव के नाम से जाना जाता है।**

अगस्त प्रस्ताव प्रस्ताव में निम्न प्रावधान थे-

- भारत के लिये डोमिनियन स्टेट्स मुख्य लक्ष्य।
- भारतीयों को सम्मिलित कर युद्ध सलाहकार परिषद की स्थापना।
- वायसराय की कार्यकारिणी परिषद का विस्तार।
- युद्ध के पश्चात् संविधान सभा का गठन किया जायेगा, जिसमें मुख्यतया भारतीय अपने सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक धारणाओं के अनुरूप संविधान के निर्माण की रूपरेखा सुनिश्चित करेंगे। संविधान ऐसा होगा कि रक्षा, अल्पसंख्यकों

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

के हित, राज्यों से संधियां तथा अखिल भारतीय सेवायें इत्यादि मुद्दों पर भारतीयों के अधिकार का पूर्ण ध्यान रखा जायेगा।

- अल्पसंख्यकों को आश्वस्त किया गया कि सरकार ऐसी किसी संस्था को शासन नहीं सोपेगी, जिसके विरुद्ध सशक्त मत हो।
- उक्त आधारों पर भारतीय सरकार को सहयोग प्रदान करेंगे।

कांग्रेस की प्रतिक्रिया —

कांग्रेस ने अगस्त प्रस्तावों को अस्वीकार कर दिया। नेहरूजी ने कहा "डोमिनियन स्टेट्स का मुद्दा पहले ही अप्रासंगिक हो चुका है"। गांधीजी ने घोषणा की- "अगस्त प्रस्तावों के रूप में सरकार ने जो घोषणायें की हैं, उनसे राष्ट्रवादियो तथा उपनिवेशी सरकार के बीच खाई और चौड़ी होगी।"

मुस्लिम लीग की प्रतिक्रिया —

यद्यपि मुस्लिम लीग ने प्रस्ताव में अल्पसंख्यकों के संबंध में दिये गये आश्वासन का स्वागत किया, किन्तु प्रस्ताव में पाकिस्तान की मांग स्पष्ट रूप से स्वीकार न किये जाने के कारण उसने भी प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया। लीग ने घोषणा की कि भारत का विभाजन ही गतिरोध के हल का एकमात्र उपाय है।

मूल्यांकन

प्रस्ताव में प्रथम बार भारतीयों द्वारा स्वयं संविधान निर्माण करने को स्वीकार किया गया। डोमिनियन स्टेट्स के मुद्दे को भी स्पष्ट रूप से स्वीकार किया गया। जुलाई 1941 में वायसराय की कार्यकारिणी परिषद का विस्तार कर भारतीयों को प्रथम बार बहुमत दिया गया, किनती रक्षा, वित्त एवं गृह सचिव जैसे महत्वपूर्ण मुद्दों पर अभी भी अंग्रेजों का वर्चस्व बना रहा। इसके अतिरिक्त एक राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद का भी गठन किया गया, जिसका कार्य संबंधित विषय पर सलाह देना था।

www.facebook.com/manishrai28/

द्वितीय विश्व युद्ध और राष्ट्रवादी प्रतिक्रिया

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

प्रस्तावना

1 सितम्बर, 1939 को जर्मनी ने पोलैंड पर आक्रमण किया, और द्वितीय विश्वयुद्ध प्रारम्भ हो गया। 3 सितम्बर 1939 को ब्रिटेन ने जर्मनी के विरुद्ध युद्ध घोषणा की तथा ब्रिटेन ने भारतीय जनमत की सलाह के बिना युद्ध में भारत के समर्थन की घोषणा कर दी।जून 1941 मे जर्मनी ने सोवियत संघ पर हमला किया तथा उसे भी युद्ध में घसीट लिया। दिसम्बर 1941 में जापान में पर्ल हार्बर स्थित अमेरिकी बेड़े पर अचानक हमला कर दिया। मार्च 1942 में जापान ने लगभग पूरे दक्षिण-पूर्व एशिया पर आधिपत्य स्थापित करने के पश्चात् रंगून को भी अधिग्रहित कर लिया। और विश्व युद्ध अपने चरम पे पहुचगया।

युद्ध के पूर्व कांग्रेस की स्थिति

कांग्रेस, ब्रिटेन की उम्मीद से कहीं अधिक फासीवाद, नाजीवाद, सैन्यवाद तथा साम्राज्यवाद की विरोधी हो गयी। किन्तु युद्ध में कांग्रेस के समर्थन का प्रस्ताव दो आधारभूत मांगों पर आधारित था:

- युद्धोपरांत संविधान सभा की बैठक आहूतकी जानी चाहिये, जो स्वतंत्र भारत् की राजनीतिक संरचना पर विचार करेगी।
- अतिशीघ्र, केंद्र में किसी प्रकार की वास्तविक एवं उत्तरदायी सरकार की स्थापना की जाये।

वायसराय लिनलिथगो ने इस प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया। किंतु कांग्रेस ने स्पष्ट किया कि युद्ध में भारतीयों का समर्थन प्राप्त करने के लिये सरकार को उक्त मांगे मानना अत्यन्त आवश्यक है।

कांग्रेस कार्य समिति की वर्धा में आयोजित बैठक 10-14 सितम्बर, 1939

इस बैठक में भारत द्वारा ब्रिटेन को युद्ध में समर्थन देने के मुद्दे पर विभिन्न विचार प्रतिध्वनित हुये-

- **गांधीजी** इन्होंने मित्र राष्ट्रों के प्रति सहानुभूतिप्रकट की। गांधीजी का मत था कि पश्चिम यूरोप के लोकतांत्रिक राज्यों और हिटलर का नेतृत्व स्वीकार करने वाले निरंकुशतावादी राज्यों में स्पष्ट अंतर है।
- **सुभाषचन्द्र बोस** और समाजवादी इनका तर्क था कि चूंकि यह युद्ध साम्राज्यवादी है तथा अपने-अपने हितों के लिए युद्धरत हैं, फलतः किसी एक पक्ष का समर्थन नहीं किया जा सकता। कांग्रेस को इस स्थिति का लाभ उठाकर स्वतंत्रता प्राप्ति के लिये तुरंत सविनय अवज्ञा आंदोलन प्रारम्भ कर देना चाहिये।
- **नेहरू** ने फासीवाद और लोकतंत्र के बीच स्पष्ट भेद प्रकट किया। उनका दृष्टिकोण यह था कि फ्रांस, ब्रिटेन और पोलैंड का पक्ष न्यायोचित है किन्तु फ्रांस और ब्रिटेन साम्राज्यवादी नीतियों वाले देश हैं और द्वितीय विश्वयुद्ध, प्रथम विश्वयुद्ध के पश्चात् पूंजीवाद के गहराते हुयेअंतर्विरोधों का परिणाम है। अतः भारत को स्वतंत्र होने से पूर्व न ही युद्ध में सम्मिलित होना चाहिये और न ही ब्रिटेन की परेशानियों का लाभ उठाकर आंदोलन प्रारम्भ करना चाहिये।

कांग्रेस कार्यसमिति ने प्रस्ताव पारित कर फासीवाद तथा नाजीवाद की भर्त्सना की। प्रस्ताव में कहा गया कि-

- भारत किसी ऐसे युद्ध में सम्मिलित नहीं हो सकता, जो प्रत्यक्षतः लोकतांत्रिक स्वतंत्रता के लिये लड़ा जा रहा हो, जबकि खुद उसे ही स्वतंत्रता से वंचित रखा जा रहा हो।

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

- यदि ब्रिटेन प्रजातांत्रिक मूल्यों तथा स्वाधीनता की रक्षा के लिये युद्ध कर रहा है तो उसे भारत की स्वाधीनता प्रदान कर यह सिद्ध करना चाहिये।
- सरकार को अतिशीघ्र ही अपने युद्ध के उद्देश्यों को सार्वजनिक बनाना चाहिये तथा यह भी स्पष्ट करना चाहिये कि भारत पर किस तरह के लोकतांत्रिक सिद्धांतों को लागू किया गया था।
- कांग्रेस का नेतृत्व ब्रिटिश सरकार और वायसराय को पूरा मौका देना चाहता था।

सरकार की प्रतिक्रिया

ब्रिटिश सरकार की प्रतिक्रिया आंतरिक तौर पर नकारात्मक थी। लिनलिथगो ने अपने वक्तव्य में (17 अक्टूबर, 1939) मुस्लिम लीग तथा देशी रियासतों को कांग्रेस के विरुद्ध उकसाने की कोशिश की। इस अवसर पर सरकार ने-

- ब्रिटेन के युद्ध पर, इससे अधिक कुछ भी कहने से इन्कार कर दिया कि ब्रिटेन भेदभावपूर्ण आक्रमण का प्रतिरोध कर रहा है।
- भविष्य के लिये यह वायदा किया कि युद्धोपरांत सरकार, भारत के कई दलों, समुदायों और हितों का प्रतिनिधित्व करने वाली शक्तियों तथा भारतीय राजाओं से इस मुद्दे पर विचार-विमर्श करेगी कि 1935 के भारत सरकार अधिनियम में किस प्रकार के संशोधन किये जायें।
- आवश्यकता पड़ने पर परामर्श लेने के लिये सरकार, एक परामर्श समिति का गठन करेगी।

सरकार की गुप्त कार्यनीति

- लिनलिथगो का वक्तव्य वास्तविकता से विचलन नहीं अपितु सामान्य ब्रिटिश योजना का हिस्सा था। जिसके अनुसार– "युद्ध से फायदा उठाकर खोये हुये उस आधार को पुनः प्राप्त करना, जो कि कांग्रेस के प्रयासों के कारण सरकार के हाथ से निकल गया था"।
- सरकार की नीति थी कि कांग्रेस को सरकार के साथ विवादों में उलझा दिया जाये तत्पश्चात् उत्पन्न परिस्थितियों का उपयोग सत्ता को और स्थायी बनाने में किया जाये।
- इसी नीति के तहत युद्ध की घोषणा के उपरांत 1935 के अधिनियम में संशोधन कर केंद्र ने राज्य के विषयों में हस्तक्षेप करने के असाधारण अधिकार प्राप्त कर लिये। जिस दिन युद्ध की घोषणा की गयी, उसी दिन नागरिक अधिकारों की स्वतंत्रता के दमन हेतु सरकार ने भारतीय सुरक्षा अध्यादेश देश पर थोप दिया।
- मई 1940 में क्रांतिकारी आंदोलन से संबंधित एक अति गुप्त अध्यादेश तैयार किया गया, इसका उद्देश्य कांग्रेस द्वारा प्रारम्भ किये जाने वाले आंदोलन को कुचलना था। इसके पीछे सरकार की मंशा थी कि वह कांग्रेस द्वारा प्रारम्भ किये गये किसी भी आंदोलन को आसानी से दबा सके तथा भारतीयों की सहानुभूति भी प्राप्त कर सके। सरकार का मानना था कि यह अध्यादेश उदारवादियों एवं वामपंथियों की सहानुभूति प्राप्त करने में रूप में प्रस्तुत करने में सफल हो जायेगी।
- ब्रिटिश भारतीय सरकार की दमनकारी एवं भेदभावमूलक नीतियों का इंग्लैंड के प्रधानमंत्री विंस्टन चर्चिल एवं भारत सचिव जेटलैंड ने पूर्णरूपेण समर्थन किया। जेटलैंड ने तो कांग्रेस को विशुद्ध हिंदूवादी संगठन तक घोषित कर दिया।

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

- धीरे-धीरे यह स्पष्ट होने लगा कि ब्रिटिश सरकार, युद्ध के पूर्व या पश्चात् अपनी उपनिवेशवादी पकड़ में किसी भी प्रकार की ढील नहीं देना चाहती तथा कांग्रेस से शत्रुतापूर्ण व्यवहार करने की मंशा रखती है।

23 अक्टूबर 1939 को कांग्रेस कार्यसमिति की बैठक आयोजित की गयी, जिसमें-

- वायसराय के वक्तव्य की पुरानी साम्राज्यवादी नीति का ही हिस्सा बताकर अस्वीकार कर दिया गया।
- युद्ध का समर्थन न करने का निर्णय किया गया।
- कांग्रेस की प्रांतीय सरकारों को त्यागपत्र देने का आदेश दिया गया।

जनवरी 1940 में लिनलिथगो ने घोषणा की कि "युद्ध के पश्चात् डोमीनियन स्टेट्स की स्थापना, भारत में ब्रिटिश सरकार की नीति का मुख्य लक्ष्य है"।

त्वरित जन सत्याग्रह के मुद्दे पर बहसः अक्टूबर 1939 में लिनलिथगो की घोषणा के पश्चात् तुरंत जन सत्याग्रह छेड़ने के मुद्दे पर एक बार पुनः बहस प्रारम्भ हो गयी। गांधीजी एवं उनके समर्थक तुरंत आंदोलन प्रारम्भ करने के पक्ष में नहीं थे, क्योंकि उनका मानना था कि-

- मित्र राष्ट्रों का पक्ष न्यायसंगत है।
- साम्प्रदायिक संवेदनशीलता एवं हिन्दू-मुस्लिम एकता के अभाव में साम्प्रदायिक दंगे प्रारम्भ हो सकते हैं।
- संगठनात्मक तौर पर कांग्रेस की स्थिति अच्छी नहीं है तथा तत्कालीन परिस्थितियां जन सत्याग्रह के प्रतिकूल हैं; एवं
- जनता अभी किसी भी प्रकार के संघर्ष के लिये तैयार नहीं है।

अतः इसके स्थान पर आवश्यक यह है कि सांगठनिक रूप से कांग्रेस को तैयार किया जाये तथा सरकार से तब तक विचार-विमर्श किया जाये जब तक यह सार्वजनिक न हो जाये कि विचार-विमर्श से समस्या का समाधान नहीं हो सकता तथा इसके लिये उपनिवेशिक शासन जिम्मेदार है। इसके पश्चात् ही आंदोलन प्रारम्भ किया जाना चाहिये।

कांग्रेस के रामगढ़ अधिवेशन (मार्च 1940) में पारित किये गये प्रस्ताव में गांधीजी तथा उनके समर्थकों के इन विचारों को पूर्ण महत्ता प्रदान की गयी। इस प्रस्ताव में कहा गया कि "जैसे ही कांग्रेस संगठन संघर्ष के योग्य हो जाता है या फिर परिस्थितियां इस प्रकार बदल जाती हैं कि संघर्ष निकट दिखाई दे, वैसे ही कांग्रेस, सविनय अवज्ञा आदोलन प्रारम्भ कर देगी"।

सुभाषचन्द्र बोस और उनके फारवर्ड ब्लाक, कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी, कम्युनिस्ट पार्टी इत्यादि वामपंथी समूहों का तर्क था कि यह युद्ध एक साम्राज्यवादी युद्ध है तथा यही उचित समय है जबकि ब्रिटिश साम्राज्यवाद के विरुद्ध चारों ओर से युद्ध छेड़कर स्वतंत्रता हासिल कर ली जाये। इनका मानना था कि जनता संघर्ष के लिए पूरी तरह तैयार है तथा आन्दोलन प्रारंभ किए जाने की प्रतीक्षा कर रही है। इन्होंने स्वीकार किया कि कांग्रेस में संगठन की कमजोरी तथा साम्प्रदायिक कटुता जैसी समस्यायें अवश्य विद्यमान हैं, किन्तु जनसंघर्ष के प्रवाह में ये सारी समस्यायें बह जायेंगी। इन्होंने तर्क दिया कि संगठन संघर्ष के पहले तैयार नहीं किया जाता अपितु इसका निर्माण संघर्ष प्रारम्भ होने के पश्चात् होता है। फलतः कांग्रेस की अतिशीघ्र आंदोलन प्रारम्भ कर देना चाहिये।

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

यहाँ तक की सुभास चन्द्र बोस ने इस बात का प्रस्ताव रखा की यदि कांग्रेस शीघ्र ही सत्याग्रह प्रारम्भ करने के मुद्दे पर उनका साथ नहीं देती तो वामपंथी उससे नाता तोड़ लें तथा समानांतर कांग्रेस का गठन कर अपनी ओर से आंदोलन प्रारम्भ करें। किन्तु **कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी और कम्युनिस्ट पार्टी** ने सुभाष चन्द्र बोस के इस प्रस्ताव से असहमति प्रकट की।

जवाहरलाल नेहरू का झुकाव दोनों पक्षों की ओर था। एक ओर उन्हें मित्र राष्ट्रों के साम्राज्यवादी चरित्र का एहसास था तो दूसरी ओर वे ऐसा कोई कदम नहीं उठाना चाहते थे, जिससे यूरोप में नाजीवाद के समर्थक हिटलर की विजय आसान हो जाए। एक ओर उनकी सम्पूर्ण मंशा और राजनितिक चिंतन त्वरित आन्दोलन प्रारम्भ किये जाने को उद्यत परिलक्षित हो रहा था तो दूसरी ओर वे नाजी विरोधी संघर्ष और जापान विरोधी संघर्ष की दुर्बल बनाये जाने के पक्षधर भी नहीं थे। बहरहाल नेहरू ने अंत में कांग्रेस नेतृत्व और गांधीजी के बहु मत का समर्थन करने का ही निर्णय किया।

प्रांतीय शासन के 28 माह

प्रस्तावना

1937 के प्रारंभ में प्रांतीय विधान सभाओं हेतु चुनाव कराने की घोषणा कर दी गयी तथा इसी के साथ ही सत्ता में भागेदारी के प्रश्न पर बहस प्रारंभ हो गयी।

इस बात पर सभी राष्ट्रवादियों में आम सहमति थी कि 1935 के अधिनियम का पूरी तरह विरोध किया जाये। किंतु मुख्य प्रश्न यह था कि ऐसे समय में जबकि आंदोलन चलाना असंभव है इसका विरोध किस तरह किया जाये। इस बात पर पूर्ण सहमति थी कि व्यापक आर्थिक और राजनीतिक कार्यक्रम को आधार बनाकर कांग्रेस को ये चुनाव लड़ने चाहिए। इससे जनता में उपनिवेशी शासन के विरुद्ध चेतना का और प्रसार होगा। लेकिन चुनाव के पश्चात क्या किया जायेगा यह तय नहीं था।

यदि चुनावों में कांग्रेसियों को प्रांतों में बहु मत मिला तो उसे सरकार बनानी चाहिए या नहीं?

इस मुद्दे को लेकर राष्ट्रवादियों के मध्य तीव्र मतभेद थे। इस मुद्दे पर बहस ने, एक बार पुनः वामपंथियों एवं दक्षिणपंथियों के मध्य उग्र रूप धारण कर लिया।

नेहरू, सुभाषचंद्र बोस, कांग्रेस सोशलिस्ट एव साम्यवादी सत्ता में भागेदारी के खिलाफ थे, तथा 1935 के अधिनियम का विरोध किये जाने के पक्ष में थे। इन्होंने तर्क दिया कि सत्ता में भागेदारी करने का अर्थ 1935 के अधिनियम को स्वीकार करना तथा राष्ट्रवादियों द्वारा स्वयं को दोषी ठहराना होगा। इसका तात्पर्य बिना अधिकार के उत्तरदायित्व स्वीकार करना होगा। इसके साथ ही इससे जनआन्दोलन का क्रांतिकारी चरित्र समाप्त हो जाएगा तथा कांग्रेस, संसदीय कार्यों में इस प्रकार उलझ जायेगी कि साम्राज्यवादी शासन का एक अंग बनकर रह जायेगी तथा स्वतंत्रता, सामाजिक-आर्थिक न्याय और गरीबी दूर करने का उसका लक्ष्य अधूरा रह जायेगा।

इस संबंध में इन्होंने यह रणनीति सुझाई कि संसद में घुसकर सरकारी कदमों का विरोध किया जाये तथा ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न कर दी जायें, जिससे 1935 के अधिनियम का अमल संभव न हो सके। (उनकी यह रणनीति पुराने स्वराजियों की ही रणनीति थीं)। दीर्घकालिक रणनीति के तहत इन्होंने सुझाव दिया कि मजदूरों और किसानों को वर्गीय आधार पर संगठित किया जाये तथा इन संगठनों को कांग्रेस से सम्बद्ध किया जाये।

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

तत्पश्चात कांग्रेस को समाजवादी राह पर लाकर आंदोलन को पुनः प्रारंभ करने का प्रयत्न किया जाये।

सता में भागीदारी क समथकों ने तर्क दिया कि वे भी 1935 के अधिनियम का विरोध करते हैं किन्तु सत्ता में भागेदारी एक अल्पकालिक रणनीति है। यद्यपि इससे स्वतंत्रता हासिल नहीं की जा सकती किंतु मौजूदा राजनीतिक परिस्थितियों में संसदीय संघर्ष की राजनीति अपनाना ही श्रेयकर है, क्योंकि हमारे पास जन-आंदोलन का कोई और विकल्प नहीं है। अतः समय की आवश्यकता है कि जन-राजनीति को संसदीय राजनीति, उसमें हो रही गतिविधियों तथा प्रांतों की सरकारों से सम्बद्ध किया जाये, जिससे आंदोलन के लिये उपयुक्त राजनीतिक वातावरण निर्मित किया जा सके। यहां चुनाव के सिद्धांत से ज्यादा महत्वपूर्ण बात रणनीति की है। उन्होंने यह अवश्य स्वीकार किया कि इसके कई खतरे भी हैं तथा सत्ता में किसी भी पद को धारण करने वाला कांग्रेसी किसी गलत रास्ते पर भी जा सकता है। लेकिन हमें इन खतरों और बुराइयों से संघर्ष करना है न कि इनके डर से प्रशासन में भागेदारी का बहिष्कार करना है। हमें प्रशासन को प्रांतों में सरकारों का गठन करने में सफल होती है तो सीमित अधिकारों के बावजूद मंत्री रचनात्मक कार्यों को प्रोत्साहित कर सकते हैं।

गांधीजी की स्थिति

इन्होंने कांग्रेस कार्यकारिणी की बैठक में सत्ता में भागेदारी का विरोध किया किंतु 1936 के प्रारंभ होने तक वे कांग्रेस को सरकार बनाने का अवसर देने के पक्ष में राजी हो गये। 1936 के प्रारंभ में लखनऊ अधिवेशन और 1937 के अंत में फैजपुर अधिवेशन में कांग्रेस ने चुनावों में भाग लेने, प्रशासन में भागेदारी के विरोध को स्थगित करने तथा सत्ता में भागेदारी के मुद्दे पर चुनाव के पश्चात विचार करने का निर्णय लिया।

कांग्रेस का चुनाव घोषणा-पत्र

कांग्रेस ने अपने घोषणा-पत्र में 1935 के भारत शासन अधिनियम को पूरी तरह अस्वीकार कर दिया। इसके अतिरिक्त उसने**नागरिक स्वतंत्रता की बहाली, राजनितिक बंदियों की रिहायी, कृषि के ढांचे में व्यापक परिवर्तन, भू-राजस्व और लगान में उचित कमी, किसानों को कर्ज से राहत तथा मजदूरों को हड़ताल करने, विरोध प्रदर्शन करने तथा संगठन बनाने के अधिकार देने इत्यादि का वचन दिया।** गांधीजी ने किसी भी चुनावी सभा को संबोधित नहीं किया।

कांग्रेस का प्रदर्शन

कांग्रेस ने 1161 सीटों में से 716 स्थानों पर चुनाव लड़ा। **असम, बंगाल, पंजाब, सिंध और उ.प. सीमांत प्रांत को छोड़कर शेष सभी प्रांतों में उसने स्पष्ट बहु मत प्राप्त किया तथा बंगाल, असम और उत्तर-पश्चिमी सीमांत प्रांत में वह सबसे बड़ी पार्टी के रूप में उभरी।**कांग्रेस ने 6 प्रांतों में सरकार का गठन किया। चुनावों में उल्लेखनीय सफलता हासिल करने के कारण कांग्रेस की प्रतिष्ठा में भारी वृद्धि हुई तथा नेहरू मानने लगे कि 'संघर्ष-समझौता-संघर्ष की रणनीति ही सही रणनीति है।

प्रांतों में कांग्रेस शासन के 28 माह

जुलाई 1937 में कांग्रेस ने छह प्रांतों- **बम्बई, मद्रास, मध्य भारत, उड़ीसा, बिहार एवं संयुक्त प्रांत** में मंत्रिमंडल का गठन किया। बाद में **असम और पश्चिमोत्तर सीमांत प्रांत में भी उसने सरकार बनायी।**

गांधीजी की सलाह: गांधीजी ने कांग्रेसियों को सलाह दी कि सरकार में शामिल होने के मुद्दे को वे सहजता से लें, गंभीरता से नहीं। यह कांटों का ताज है। इससे कोई गौरव

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

प्राप्त नहीं होगा। ये पद इसलिये स्वीकार किये गये हैं, जिससे हम यह जान सकें कि हम अपने राष्ट्रवादी लक्ष्य की ओर आपेक्षित गति से आगे बढ़ रहे हैं या नहीं। गांधी ने सलाह दी कि 1935 के अधिनियम का उपयोग हुकूमत की उम्मीदों के अनुसार नहीं किया जाना चाहिए तथा हुकूमत जिस रूप में चाहती है, उस रूप में इसके इस्तेमाल से बचना चाहिए।

कांग्रेस मत्रिमंडलों के अधीन किये गये कार्य

नागरिक स्वतंत्रता

कांग्रेस मंत्रिमंडलों ने नागरिक स्वतंत्रता की बहाली हेतु अनेक कदम उठाये-

- 1932 में जनसुरक्षा अधिनियम द्वारा प्रांतीय सरकारों को प्रदान किये गये सभी आपातकालीन अधिकार रद्द कर दिये।
- हिन्दुस्तान सेवा दल और यूथ लीग जैसे संगठन तथा पुस्तकों एवं पत्र-पत्रिकाओं से प्रतिबंध हटा दिया गया।
- प्रेस पर लगाये गये प्रतिबंधों को समाप्त कर दिया गया।
- सरकारी विज्ञापन के लिये जिन प्रेसों को काली सूची में डाल दिया गया था, उनको उठा लिया गया।
- जब्त किये गये हथियार वापस लौटा दिये गये तथा रद्द किये गये लाइसेंस पुनः बहाल कर दिये गये।
- पुलिस के अधिकारों में कटौती कर दी गयी। पुलिस द्वारा जनता के बीच दिए गए व्याख्यान को दर्ज करने तथा गुप्तचर पुलिस द्वारा राजनितिक कार्यकर्ताओं का पीछा किये जाने की व्यवस्था पर रोक लगा दी गयी।
- राजनीतिक बंदियों तथा जेल में बंद क्रांतिकारियों को रिहा कर दिया गया। राजनीतिक निर्वासन तथा नजरबंदी से संबंधित सभी आदेश रद्द कर दिये गये।
- बंबई में सविनय अवज्ञा आंदोलन के दौरान जब्त की गयी भूमि, किसानों को वापस कर दी गयी।
- सविनय अवज्ञा आदोलन के दौरान बर्खास्त अधिकारियों के पेंशन-भत्ते पुनः प्रारंभ कर दिये गये।

गांधीजी ने कांग्रेसजनों से आग्रह किया कि वे ये सिद्ध करके दिखायें कि वे पुलिस और सेना की अत्यल्प सहायता से शासन चला सकते हैं। किंतु नागरिक स्वतंत्रता के संबंध में कांग्रेस मंत्रियों द्वारा किये गये कुछ कार्यों की आलोचना भी की गयी। जुलाई 1937 में एक समाजवादी नेता युसुफ मेहर अली को उत्तेजक भाषण देने के आरोप में मद्रास सरकार ने दंडित किया। इसी तरह अक्टूबर 1937 में एक समाजवादी कांग्रेसी नेता एस.एस. बाटलीवाला पर राजद्रोह भड़काने वाला भाषण देने का आरोप लगाया गया। इस कारण मद्रास सरकार ने उन्हें गिरफ्तार कर उन पर मुकदमा चलाया तथा उन्हें छह माह की सजा दी गयी।

बंबई के तत्कालीन गृहमंत्री के.एम. मुंशी ने साम्यवादी तथा वामपंथी कांग्रेसियों पर नजर रखने के लिये खुफिया विभाग का उपयोग किया।

कृषि सुधार:जमींदारी प्रथा को पूरी तरह समाप्त करके भी कांग्रेस ने कृषि ढांचे के कायाकल्प की कोशिश नहीं की। इसके प्रमुख कारण थे-

- मंत्रिमंडलों के पास पर्याप्त अधिकार नहीं थे।
- इस कार्य के लिये उनके पास वित्तीय संसाधनों का घोर अभाव था, क्योंकि भारतीय राजस्व के अधिकांश हिस्से का उपयोग भारत की केंद्रीय सरकार करती थी।
- कांग्रेसी मंत्रिमंडल मौजूदा प्रशासनिक ढांचे को किसी भी प्रकार से परिवर्तित नहीं कर सकते थे क्योंकि

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

ऐसा करने का अधिकार केवल वायसराय या गवर्नरों के ही पास था।

- विभिन्न वर्गों के बीच सामंजस्य बैठाना एक अन्य प्रमुख समस्या थी। विभिन्न वर्गों को साथ लेकर चलाया जाने वाला आन्दोलन तभी प्रगति कर सकता था, जब विभिन्न प्रतिस्पर्धी हितों के बीच ताल-मेल बनाये रखा जाये।
- उपनिवेशवाद के खिलाफ संघर्ष करने हेतु भारतीयों को एक जुट करने के लिये आपसी सामंजस्य अत्यंत आवश्यक था।
- कांग्रेसी मंत्रिमंडलों के पास ज्यादा समय नहीं था।
- लगभग सभी कांग्रेस शासित राज्यों यथा-बंबई, बिहार, मद्रास, असम और संयुक्त प्रांत में प्रतिक्रियावादी तत्वों वाला द्वितीय सदन मौजूद था, जिसे विधान परिषद (लेजिस्लेटिव काऊसिल) के नाम से जाना जाता था। इसमें जमीदारों, भूस्वामियों, पूंजीपतियों और सूदखोरों का वर्चस्व था। इन परिषदों में कांग्रेस अल्पमत में थी। अतः किसी भी कानून को पास कराने के लिये सरकार को इन तत्वों से समझौता करना पड़ता था।
- कृषि का ढांचा अत्यंत जटिल और उलझा हु आथा।
- किंतु इन अवरोधों के पश्चात भी कांग्रेसी मंत्रिमंडलों ने कृषि ढांचे में अनेक सुधार किये तथा अनेक विधानों का निर्माण किया। ये विधान-भू-सुधार, ऋणग्रस्तता से राहत, वनों में पशुओं को चराने की अनुमति, भू-राजस्व की दरों में कमी तथा नजराना व बेगारी जैसे गैर-कानूनी कार्यों को समाप्त करने इत्यादि से संबंधित थे।

मजदूरों क प्रति नजरियाः

कांग्रेस मंत्रिमंडलों का रुख मजदूर समर्थक था। इनका आधारभूत दृष्टिकोण था- मजदूरों के हितों की रक्षा तथा औद्योगिक शांति की स्थापना। इन्होंने हड़तालों का कम से कम आयोजन करने तथा हड़ताल पर जाने के पहले अनिवार्य मध्यस्थता की वकालत की। मजदूरों और मालिकों के बीच सौहार्द सम्बन्धों की स्थापना हेतु उन्होंने कांग्रेस के कार्यकर्ताओं तथा कांग्रेसी मंत्रियों को मध्यस्थ बनाने की सलाह दी। इसके साथ ही इन्होंने श्रमिकों की माली हालत सुधारने तथा उनकी मजदूरी में वृद्धि करने के प्रयास भी किये।

कांग्रेस मंत्रिमंडलों ने उग्रवादी मजदूर संघ की हड़तालों को कानून एवं व्यवस्था के रूप में हल किया तथा जहां तक संभव हो सका, इनके लिये मध्यस्थ की भूमिका निभायी। इस रणनीति को काफी सफलता मिली, किंतु, बंबई में यह उतनी सफल नहीं रही। इसके अतिरिक्त वामपंथी आलोचक भी इस व्यवस्था से उतने संतुष्ट नहीं थे। आंदोलनकारी मजदूरों के विरुद्ध उन्होंने धारा 144 का इस्तेमाल किया तथा कई अवसरों पर मजदूर नेताओं को गिरफ्तार भी किया गया।

समाज कल्याण संबंधी सुधारः

इन सुधारों में निम्न प्रावधान सम्मिलित थे-

- कुछ निश्चित क्षेत्रों में शराब निषेध लागू कर दिया गया।
- हरिजनों के कल्याण हेतु अनेक उपाय लागू किये गये। जिनमें- मंदिरों में प्रवेश, सामान्य नागरिक सुविधाओं का प्रयोग, छात्रवृत्तियां, पुलिस एवं सरकारी नौकरियों में इसकी संख्या में वृद्धि इत्यादि सम्मिलित थे।

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

- प्राथमिक, तकनीकी एवं उच्च शिक्षा की ओर ज्यादा ध्यान दिया गया तथा लोक स्वास्थ्य एवं स्वच्छता जैसे मुद्दों को प्राथमिकता दी गयी।
- अनुदान एवं अन्य तरीकों द्वारा खादी के प्रयोग को प्रोत्साहित किया गया।
- बंदी सुधार प्रारंभ किये गये।
- स्वदेशी उद्योगों को प्रोत्साहन दिया गया।
- राष्ट्रीय योजना के विकास को प्रोत्साहित करने हेतु 1938 में कांग्रेस अध्यक्ष **सुभाषचंद्र बोस ने 'राष्ट्रीय योजना समिति' का गठन**किया गया।

कांग्रेस की अन्य संसदीय जन-गतिविधियाँ: इन गतिविधियों में निम्न प्रयास सम्मिलित थे-

- जन-शिक्षा अभियान की स्थापना।
- कांग्रेस पुलिस स्टेशनों एवं पंचायतों की स्थापना।
- कांग्रेस लोक शिकायत समितियों की स्थापना; जिसका कार्य लोक शिकायतों की सरकार के सम्मुख प्रस्तुत करना था।
- राज्यों के लोक आंदोलन।

मूल्यांकन

यद्यपि 1939 के अंत तक कांग्रेसियों के मध्य, सत्ता के लिये अवसरवादिता, आंतरिक कलह एवं जोड़-तोड़ के प्रयास जैसी बुराइयां परिलक्षित होनी लगी थीं किंतु फिर भी उनके संसदीय कार्यों ने उनकी प्रतिष्ठा में वृद्धि की तथा जनता के मध्य उनके आधार को पुख्ता किया। कांग्रेस का 28 माह का शासन निम्न कारणों से भी महत्वपूर्ण था-

- यह धरना सिद्ध हो गयी की मौलिक सामाजिक संक्रमण के लिए भारतीय स्व-शासन आवश्यक है।
- मंत्रिमंडलों ने भारतीयों के सामाजिक, राजनैतिक एवं सांस्कृतिक उत्थान की दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किये।
- मंत्रिमंडलों ने सांप्रदायिकता को रोकने के सार्थक एवं सफल प्रयास किये।
- अंग्रेजी नौकरशाही के मनोबल में कमी आ गयी।
- कांग्रेस के संसदीय कार्यों ने तब तक के विरोधी तत्वों पर अंकुश लगाया जैसे-जमींदार इत्यादि।
- लोगों को एक ऐसा खाका खीचने में मदद मिली जैसे कि उन्होंने स्वतंत्रता प्राप्त कर ली हो।
- मंत्रिमंडलों के प्रशासनिक कार्यों ने इस भ्रांति को तोड़ दिया कि भारतीय शासन करने में सक्षम नहीं है।

गोलमेज सम्मेलन – गांधी-इरविन समझौता- कराची अधिवेशन- पूना समझौता

प्रथम गोलमेज सम्मेलन

सरकार ने **12 नवंबर 1930 को साइमन कमीशन की रिपोर्ट तथा संवैधानिक मुद्दों पर चर्चा करने के निमित्त,** लंदन में प्रथम गोलमेज सम्मेलन का आयोजन किया। **ब्रिटिश सरकार एवं भारतीयों के मध्य समान स्तर पर आयोजित की गयी यह प्रथम वार्ता थी।** जहां **कांग्रेस एवं अधिकांश व्यवसायिक संगठनों ने इस सम्मेलन का बहिष्कार किया**, वहीं **मुस्लिम लीग, हिन्दू महासभा, उदारवादियों, दलित वर्ग तथा भारतीय रजवाड़ों ने इस सम्मलेन में भाग लिया।**

इस सम्मेलन में भाग लेने वाले प्रतिनिधि मुख्यतः तीन भागों में विभक्त किये जा सकते हैं।

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

- तीनों ब्रिटिश दल-लिबरल, कंजरवेटिव और श्रमिक दल के प्रतिनिधि।
- ब्रिटिश भारत से ब्रिटिश सरकार द्वारा मनोनीत सदस्य।
- भारत के राज्यों से राजकुमार या उनके द्वारा मनोनीत प्रतिनिधि।

सम्मेलन में भाग लेने वाले प्रतिनिधियों के चयन का मापदण्ड असमान था। ब्रिटेन की तीनों पार्टियों का प्रतिनिधित्व अलग-अलग प्रतिनिधि कर रहे थे, जबकि भारतीय प्रतिनिधियों में से कुछ वायसराय द्वारा मनोनीत थे तथा कुछ का मनोनयन भारतीय रजवाड़ों ने किया था। इस सम्मेलन में राज्य लोक संगठन का कोई प्रतिनिधित्व नहीं था। प्रतिनिधियों के मनोनयन का मुख्य आधार ब्रिटिश सरकार के प्रति निष्ठा तथा उनके स्वशासन संबंधी विचार थे।

इस सम्मेलन में सम्मिलित सभी दलों के प्रतिनिधि केवल अपने व्यक्तिगत हितों के पक्षपोषण में प्रयासरत रहे। सम्मेलन के दौरान केवल समस्यायें व विचारार्थ विषय ही प्रस्तुत किये गये लेकिन कोई ठोस परिणाम सामने नहीं आ सका। वैसे भी भारत के सबसे बड़े राजनीतिक संगठन 'कांग्रेस' के सम्मेलन में भाग न लेने से यह सम्मेलन अधूरा सा हो गया था। अंततः 19 जनवरी 1931 को बिना किसी वास्तविक उपलब्धि के यह सम्मेलन समाप्त हो गया।

गांधी-इरविन समझौता

25 जनवरी 1931 को गांधीजी तथा कांग्रेस के अन्य सभी प्रमुख नेता बिना शर्त कारावास से रिहा कर दिये गये। कांग्रेस कार्यकारिणी समिति ने गांधीजी को वायसराय से चर्चा करने के लिये अधिकृत किया। तत्पश्चात 19 फरवरी 1931 को गांधीजी ने भारत के तत्कालीन वायसराय लार्ड इरविन से भेंट की और उनकी बातचीत 15 दिनों तक चली। इसके परिणामस्वरूप 5 मार्च 1931 को एक समझौता हुआ, जिसे गांधी-इरविन समझौता कहा जाता है। इस समझौते ने कांग्रेस की स्थिति को सरकार के बराबर कर दिया। **इस समझौते में सरकार की ओर से लार्ड इरविन इस बात पर सहमत हुये कि-**

- हिंसात्मक अपराधियों के अतिरिक्त सभी राजनैतिक कैदी छोड़ दिये जायेंगे।
- अपहरण की सम्पत्ति वापस कर दी जायेगी।
- विभिन्न प्रकार के जुर्मानों की वसूली को स्थगित कर दिया जायेगा।
- सरकारी सेवाओं से त्यागपत्र दे चुके भारतीयों के मसले पर सहानुभूतिपूर्वक विचार-विमर्श किया जायेगा।
- समुद्र तट की एक निश्चित सीमा के भीतर नमक तैयार करने की अनुमति दी जायेगी।
- मदिरा, अफीम और विदेशी वस्तओं की दुकानों के सम्मुख शांतिपूर्ण विरोध प्रदर्शन की आज्ञा दी जायेगी।
- आपातकालीन अध्यादेशों को वापस ले लिया जायेगा।

किन्तु वायसराय ने गांधीजी की निम्न दो मांगे अस्वीकार कर दी-

- पुलिस ज्यादतियों की जांच करायी जाये।
- भगत सिंह तथा उनके साथियों की फांसी की सजा माफ कर दी जाये।

कांग्रेस की ओर से गांधीजी ने आश्वासन दिया कि-

- (i) सविनय अवज्ञा आंदोलन स्थापित कर दिया जायेगा। तथा

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

- (ii) कांग्रेस द्वितीय गोलमेज सम्मेलन में इस शर्त पर भाग लेगी कि सम्मेलन में संवैधानिक प्रश्नों के मुद्दे पर विचार करते समय परिसंघ, भारतीय उत्तरदायित्व तथा भारतीय हितों के संरक्षण एवं सुरक्षा के लिये अपरिहार्य मुद्दों पर विचार किया जायेगा। (इसके अंतर्गत रक्षा, विदेशी मामले, अल्पंसख्यकों की स्थिति तथा भारत की वित्तीय साख जैसे मुद्दे शामिल होगे)।

सविनय अवज्ञा आदोलन का मूल्यांकन

क्या गांधी-इरविन समझौता अपने उद्देश्यों से पीछे हट गया था?

गांधीजी द्वारा सविनय अवज्ञा आन्दोलन की स्थगित किये जाने के निर्णय से यह बात रेखांकित होती है कि गांधी-इरविन समझौता अपने उद्देश्यों से पीछे नहीं हटा था क्योंकि-

- किसी भी जनआंदोलन के लिये आवश्यक है कि उसका कार्यकाल छोटा ही अर्थात उसे ज्यादा लंबा न खींचा जाये।
- कार्यकर्ताओं या सत्याग्रहियों के विपरीत, जनसामान्य की त्याग करने की क्षमता सीमित होती है।
- 1930 के पश्चात, आंदोलन में विरक्तता के लक्षण परिलक्षित होने लगे थे। विशेषरूप से उन दुकानदारों एवं व्यापारियों में, जिनमें आंदोलन के प्रति अभूतपूर्व उत्साह था।
- निःसंदेह युवा भी निराश हो चुके थे। उन्होंने बड़ी तत्परता एवं गर्मजोशी से आंदोलन में सहभागिता निभायी किंतु उन्हें निराशा ही हाथ लगी। गुजरात के किसानों में भी निराशा का वातावरण व्याप्त था क्योंकि उन्हें उनकी भूमि वापस नहीं लौटायी गयी थी। (वास्तव में गुजराती काश्तकारों को उनकी जमीन वापस तभी मिली, जब सूबे में कांग्रेस सरकार का गठन हुआ)। किंतु इसके पश्चात भी अधिकांश भारतीय इस बात से प्रसन्न थे कि उपनिवेशी सरकार ने उनके आदोलन साथ समझौते पर दस्तखत किये। आंदोलनकारियों को जब जेल से रिहा किया गया तो जनता ने किसी नायक की तरह उनका स्वागत किया।

सविनय अवज्ञा आदोलन की असहयोग आंदोलन से तुलना

- इस आंदोलन ने **'पूर्ण स्वतंत्रता' को अपना मुख्य लक्ष्य घोषित किया**, जबकि असहयोग आंदोलन का लक्ष्य **'स्वराज्य'** था।
- आंदोलन में कानून की अवज्ञा को मुख्य हथियार के रूप में प्रयुक्त किया गया, जबकि असहयोग आंदोलन का मुख्य उद्देश्य उपनिवेशी शासन से असहयोग था।
- बुद्धिजीवी वर्ग के सहयोग में थोड़ा गिरावट आयी तथा विरोध प्रदर्शन में उसने वह तत्परता नहीं दिखाई, जैसा कि असहयोग आंदोलन के दौरान था। जैसे- वकीलों द्वारा वकालत छोड़ना एवं छात्रों द्वारा सरकारी शिक्षण संस्थानों का बहिष्कार कर राष्ट्रीय शिक्षण संस्थाओं में प्रवेश लेना।
- इस आंदोलन में मुसलमानों की सहभागिता असहयोग आंदोलन के समान नहीं थी।
- आंदोलन में कोई बड़ा मजदूर विद्रोह परिलक्षित नहीं हुआ।
- सविनय अवज्ञा आंदोलन में किसानों एवं व्यावसायिक वर्ग की व्यापक भागेदारी ने अन्य वर्गों की क्षति की पूर्ति की।

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

- इस आंदोलन में राजनीतिक बदियों की संख्या असहयोग आदोलन की तुलना में लगभग तीन गुनी अधिक थी।
- सांगठनिक रूप से कांग्रेस ज्यादा सशक्त थी।

कांग्रेस का कराची अधिवेशन

गांधी-इरविन समझौते या दिल्ली समझौते को स्वीकृति प्रदान करने के लिये कांग्रेस का अधिवेशन **29 मार्च 1931** में कराची में आयोजित किया गया। **वल्लभभाई पटेल** इसके अध्यक्ष थे। इससे छह दिन पहले भगत सिंह, राजगुरु एवं सुखदेव को फांसी दी गयी थी। यद्यपि गांधीजी ने इन्हें बचाने की कोशिश की थी, किंतु भारतीय गांधीजी से तीव्र नाराज थे। गांधीजी से अपेक्षा थी कि वे समझौते पर हस्ताक्षर नहीं करेंगे। गांधीजी को अपनी कराची यात्रा के दौरान जनता के तीव्र रोष का सामना करना पड़ा। उनके खिलाफ प्रदर्शन किये गये तथा उन्हें काले झंडे दिखाये गये। पंजाब नौजवान सभा ने भगत सिंह एवं उनके कामरेड साथियों को फांसी की सजा से न बचा पाने के लिये गांधीजी की तीव्र आलोचना की।

कराची में कांग्रेस का प्रस्ताव

- किसी भी तरह की राजनीतिक हिंसा का समर्थन न करने की बात दोहराते हुये भी कांग्रेस ने इन क्रांतिकारियों के वीरता और बलिदान की प्रशंसा की। दिल्ली समझौते को मंजूरी दे दी।
- पूर्ण स्वराज्य के लक्ष्य को पुनः दोहराया गया।
- कांग्रेस ने दो मुख्य प्रस्तावों को अपनाया- इनमें से एक मौलिक अधिकारों और दूसरा राष्ट्रीय आर्थिक कार्यक्रमों से सम्बद्ध था। इन प्रस्तावों के कारण कराची सत्र एक यादगार सत्र बन गया।

मौलिक अधिकारों से सम्बद्ध प्रस्ताव में निम्न प्रावधानों को सुनिश्चित किया गया-

- अभिव्यक्त एवं प्रेस की पूर्ण स्वतंत्रता।
- संगठन बनाने की स्वतंत्रता।
- सार्वभौम वयस्क मताधिकार के आधार पर चुनावों की स्वतंत्रता।
- सभा एवं सम्मेलन आयोजित करने की स्वतंत्रता।
- जाति, धर्म एवं लिंग इत्यादि से हटकर कानून के समक्ष समानता का अधिकार।
- सभी धर्मों के प्रति राज्य का तटस्थ भाव।
- निःशुल्क एवं अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा की गारंटी।
- अल्पसंख्यकों तथा विभिन्न भाषाई क्षेत्रों की संस्कृति, भाषा एवं लिपि की सुरक्षा की गारंटी।

राष्ट्रीय आर्थिक कार्यक्रमों से सम्बद्ध जो प्रस्ताव पारित किये गये, उनमें सम्मिलित थे

- लगान और मालगुजारी में उचित कटौती।
- अलाभकर जोतों को लगान से मुक्ति।
- किसानों को कर्ज से राहत और सूदखोरों पर नियंत्रण।
- मजदूरों के लिये बेहतर सेवा शर्तें, महिला मजदूरों की सुरक्षा तथा काम के नियमित घंटे।
- मजदूरों और किसानों को अपने यूनियन बनाने की स्वतंत्रता।
- प्रमुख उद्योगों, परिवहन और खदान को सरकारी स्वामित्व एवं नियत्रंण में रखने का वायदा।

इस अधिवेशन में **कांग्रेस ने पहली बार पूर्ण स्वराज्य को परिभाषित किया** और बताया कि जनता के लिये पूर्ण

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

स्वराज्य का अर्थ क्या है। कांग्रेस ने यह भी घोषित किया कि 'जनता के शोषण को समाप्त करने के लिये राजनीतिक आजादी के साथ-साथ आर्थिक आजादी भी आवश्यक है'।

द्वितीय गोलमेज सम्मेलन

दिल्ली समझौते के प्रावधान के अंतर्गत **कांग्रेस के एकमात्र प्रतिनिधि के रूप में गांधीजी, द्वितीय गोलमेज सम्मेलन** में भाग लेने के लिये 29 अगस्त 1931 को लंदन रवाना हुये। 7 सितम्बर 1931 से 1 दिसम्बर 1931 तक चले इस सम्मेलन में गांधीजी के**'राजपूताना'** नामक जहाज में **महादेव देसाई, मदनमोहन मालवीय, देवदास गांधी, घनश्यामदास बिड़ला एंव मीरा बेन** भी थीं। यद्यपि इस गोलमेज सम्मेलन से गांधीजी को कुछ विशेष प्राप्त होने की उम्मीद नहीं थी क्योंकि-

- ब्रिटेन में चर्चिल के नेतृत्व में दक्षिण पंथी खेमे ने ब्रिटिश सरकार द्वारा कांग्रेस को बराबरी का दर्जा देकर बात करने का तीव्र विरोध किया। उसने भारत में और सुदृढ़ ब्रिटिश शासन का माग की। ब्रिटेन में रैम्जे मैक्डोनाल्ड के नेतृत्व में बनी लेबर पार्टी में रूढ़िवादी सदस्यों का बोलबाला था तथा इसी समय सेमुअल होअर को भारत का गृहसचिव नियुक्त किया गया, जो कि घोर दक्षिणपंथी था।
- द्वितीय गोलमेज सम्मेलन में मुख्यतया रूढ़िवादी, प्रतिक्रियावादी, साम्प्रदायिक एवं ब्रिटिश राजभक्तों के प्रतिनिधि थे, जिनका उपयोग साम्राज्यवादी सरकार ने यह प्रदर्शित करने के लिये किया कि कांग्रेस सभी भारतीयों की एकमात्र प्रतिनिधि संस्था नहीं है। साथ ही सरकार का मकसद था कि हर मोर्चे पर गांधी जी को परास्त किया जाये।
- अल्पसंख्यकों के मुद्दे पर शीघ्र ही सम्मेलन में गतिरोध पैदा हो गया। मुसलमानों, ईसाईयों, आंग्ल-भारतीयों एवं दलितों ने पृथक प्रतिनिधित्व की मांग प्रारंभ कर दी। ये सभी आपस में मिलकर 'अल्पसंख्यक गठजोड़' के रूप में संगठित हो गये। किंतु गांधीजी ने साम्प्रदायिक आधार पर किसी भी संवैधानिक प्रस्ताव का अंत तक विरोध किया।
- भारतीय रजवाड़े भी संघ बनाने के मुद्दे पर ज्यादा उत्साहित नहीं थे। मुख्यतः उस स्थिति में जब सविनय अवज्ञा आंदोलन स्थगित कर कांग्रेस, केंद्र में सरकार का गठन करे।

द्वितीय गोलमेज सम्मेलन, रैम्जे मैकडोनाल्ड की इस घोषणा के साथ संपन्न हुआ-

- दो मुस्लिम प्रांतों-उत्तर-पश्चिमी सीमांत प्रांत एवं सिंध का गठन।
- भारतीय सलाहकारी परिषद की स्थापना।
- तीन विशेषज्ञ समितियों- वित्त, मताधिकार एवं राज्यों संबंधी समितियों का गठन
- यदि भारतीयों में सहमति नहीं हो सकी तो सर्वसम्मत साम्प्रदायिक निर्णय की घोषणा।

सविनय अवज्ञा आन्दोलन का द्वितीय चरण

अस्थायी शांति का काल मार्च-दिसम्बर 1931

इस काल में भी विभिन्न गतिविधियों ने भारतीयों में साम्राज्यवादी शासन के विरुद्ध संघर्ष की भावना को जीवित रखा। संयुक्त प्रांत में कांग्रेस-लगान में कमी करने, बकाया लगान को माफ करने तथा लगान अदा न करने के कारण काश्तकारों को उनकी भूमि से बेदखल करने की प्रक्रिया पर रोक लगाने की मांग को लेकर प्रारम्भ किये गये आंदोलन को नेतृत्व प्रदान कर रही थी। उत्तर-पश्चिम सीमांत प्रांत में हुकूमत ने खुदाई खिदमतगार के कार्यकर्ताओं एवं उन किसानों पर कठोर

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

दमनात्मक कार्रवाई की, जो सरकार द्वारा बलपूर्वक लगान वसूल करने का विरोध कर रहे थे। बंगाल में सरकार भेदभावपूर्ण अध्यदेशों के द्वारा शासन चला रही थी तथा आतंकवाद से निबटने के नाम पर उसने हजारों लोगों को कारावास में डाल दिया था। सितम्बर 1931 में हिजली जेल में राजनीतिक बंदियों पर गोली चलाई गयी, जिसमें दो लोगों की मृत्यु हो गयी।

सरकार का परिवर्तित रुखः दिल्ली समझौते से उच्च ब्रिटिश अधिकारियों के सम्मुख यह तथ्य उभरकर सामने आया कि इस समझौते से कांग्रेस की प्रतिष्ठा एवं भारतीयों के उत्साह में वृद्धि हुयीहै तथा ब्रिटिश सरकार की प्रतिष्ठा को आघात पहुंचा है। फलतः उन्होंने यथास्थिति को परिवर्तित करने की योजना बनायी। इस योजना के अंतर्गत ब्रिटिश सरकार ने तीन प्रावधानों को अपनाने की रणनीति बनायी-

- गांधीजी को पुनः कोई जन-आंदोलन प्रारंभ करने की अनुमति नहीं दी जायेगी।
- कांग्रेस की सद्भावना आवश्यक नहीं है। अपितु इसके स्थान पर उन लोगों का सहयोग एवं समर्थन अति आवश्यक है, जिन्होंने कांग्रेस के विरुद्ध हुकूमत का साथ दिया है, उदाहरणार्थ-सरकारी सेवक एवं राजभक्त इत्यादि।
- राष्ट्रीय आंदोलन को अब ग्रामीण क्षेत्रों में प्रसारित एवं संगठित होने की अनुमति नहीं दी जायेगी।

कांग्रेस कार्यकारिणी द्वारा सविनय अवज्ञा आंदोलन पुनः प्रारंभ किये जाने की घोषणा के पश्चात भारत के नये वायसराय विलिंगडन ने 31 दिसम्बर 1931 को गांधीजी से मिलने से इंकार कर दिया। 4 जनवरी 1932 को गांधीजी को गिरफ्तार कर लिया गया।

अध्यादेशों का राज

4 जनवरी 1932 को गांधीजी की गिरफ्तारी के साथ ही सरकार ने राष्ट्रीय आंदोलन पर पूर्णरुपेण हमला प्रारंभ कर दिया। प्रशासन को असीमित और मनमानी शक्तियां देने वाले अनेक अध्यादेश जारी किये गये तथा **'नागरिक-सैनिक कानून'** की शुरुआत हो गयी। सभी स्तरों पर कांग्रेस के संगठनों को प्रतिबंधित कर दिया गया, राजनीतिक कार्यकर्ताओं को जेल में ठूस दिया गया, कांग्रेस से सहानुभूति रखने वाले लोगों को यातनायें दी गयीं, नागरिक अधिकारों को समाप्त कर दिया गया, सम्पत्तियां कुर्क कर ली गयीं तथा गांधीजी के आश्रमों पर जबरदस्ती अधिकार कर लिया गया। अंग्रेजी सरकार के इस दमन का शिकार महिलायें भी हुयीं। प्रेस के खिलाफ भी कार्रवाई की गयी तथा राष्ट्रवादी साहित्य पर प्रतिबंध लगा दिया गया।

जनता की प्रतिक्रियाः सरकारी दमन के खिलाफ जनता में तीव्र रोष था। यद्यपि जनता असंगठित तथा अपरिपक्व थी किंतु उसकी प्रतिक्रिया व्यापक थी। केवल प्रथम चार महीनों में ही लगभग 80 हजार सत्याग्रहियों को जेल में डाल दिया गया। इनमें से अधिकांश शहरी और निर्धन ग्रामीण थे। विरोध प्रदर्शन के तरीकों में- शराब की दुकानों पर धरने, विदेशी कपड़ों की दुकानों पर धरने, अवैधानिक सम्मेलन, अहिंसक प्रदर्शन, राष्ट्रीय दिवस का आयोजन, राष्ट्रीय, झंडे का प्रतीकात्मक रोहण, चौकीदारी कर का भुगतान न करना, नमक सत्याग्रह, वन कानूनों का उल्लंघन तथा बम्बई के निकट गुप्त रेडियो ट्रांसमीटर की स्थपाना प्रमुख थे। सविनय अवज्ञा आदोलन के इस चरण में दो भारतीय रियासतों-कश्मीर एवं अलवर में तीव्र जन-प्रतिक्रिया का उभरना आंदोलन का एक महत्वपूर्ण पहलू था। किंतु इतना होने पर भी यह आंदोलन ज्यादा लंबे समय तक खिंच सका क्योंकि

गांधीजी तथा अन्य राष्ट्रवादी नेता, जन-प्रतिक्रिया को संगठित करने में पर्याप्त समय नहीं दे सके; तथा

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

जनता असंगठित एवं अपरिपक्व थी। अंततः अप्रैल 1934 में गांधीजी ने सविनय अवज्ञा आदोलन वापस लेने का निर्णय लिया। यद्यपि गांधीजी के निर्णय से जनता तथा राजनीतिक कार्यकर्ताओं में थोड़ी निराशा अवश्य हु यी किंतु उनमें कांग्रेस के प्रति निष्ठा कम नहीं हु यी। उन्होंने वास्तविक रूप से न सही दिल से स्वतंत्रता का संघर्ष अवश्य जीत लिया था।

साम्प्रदायिक निर्णय और पूना समझौता

ब्रिटेन के प्रधानमंत्री **रेम्जे मेकडोनाल्ड ने 16 अगस्त 1932 को 'साम्प्रदायिक निर्णय'** की घोषणा की। साम्प्रदायिक निर्णय, उपनिवेशवादी शासन की 'फूट डालो और राज करो' की नीति का एक और प्रमाण था।

साम्प्रदायिक निर्णय के प्रावधान

- मुसलमानों, सिखों एवं यूरोपियों को पृथक साम्प्रदायिक मताधिकार प्रदान किया गया।
- आंग्ल भारतीयों, भारतीय ईसाईयों तथा स्त्रियों को भी पृथक सांप्रदायिक मताधिकार प्रदान किया गया।
- प्रांतीय विधानमंडल में साम्प्रदायिक आधार पर स्थानों का वितरण किया गया।
- सभी प्रांतों को विभिन्न सम्प्रदायों के निर्वाचन क्षेत्रों में विभक्त कर दिया गया।
- अन्य शेष मतदाता, जिन्हें पृथक निर्वाचन क्षेत्रों में मताधिकार प्राप्त नहीं हो सका था उन्हें सामान्य निर्वाचन क्षेत्रों में मतदान का अधिकार प्रदान किया गया।
- बम्बई प्रांत में सामान्य निर्वाचन क्षेत्रों में से सात स्थान मराठों के लिये आरक्षित कर दिये गये।
- विशेष निर्वाचन क्षेत्रों में दलित जाति के मतदाताओं के लिये दोहरी व्यवस्था की गयी। उन्हें सामान्य निर्वाचन क्षेत्रों तथा विशेष निर्वाचन क्षेत्रों दोनों जगह मतदान का अधिकार दिया गया।
- सामान्य निर्वाचन क्षेत्रों में दलित जातियों के निर्वाचन का अधिकार बना रहा।
- दलित जातियों के लिये विशेष निर्वाचन की यह व्यवस्था बीस वर्षों के लिये की गयी।
- दलितों को अल्पसंख्यक के रूप में मान्यता दी गयी।

कांग्रेस का पक्ष यद्यपि कांग्रेस साम्प्रदायिक निर्णय के विरुद्ध थी किंतु अल्पसंख्यकों से विचार-विमर्श किये बिना वह इसमें किसी भी प्रकार के परिवर्तन के पक्ष में नहीं थी। इस प्रकार साम्प्रदायिक निर्णय से गहरी असहमति रखते हु ये कांग्रेस ने निर्णय किया कि वह न तो साम्प्रदायिक निर्णय को स्वीकार करेगी न ही इसे अस्वीकार करेगी।

साम्प्रदायिक निर्णय द्वारा, दलितों को सामान्य हिन्दुओं से पृथक कर एक अल्पसंख्यक वर्ग के रूप मे मान्यता देने तथा पृथक प्रतिनिधित्व प्रदान करने का सभी राष्ट्रवादियों ने तीव्र विरोध किया।

गांधीजी की प्रतिक्रिया

गांधीजी ने साम्प्रदायिक निर्णय की राष्ट्रीय एकता एवं भारतीय राष्ट्रवाद पर प्रहार के रूप में देखा। उनका मत था कि यह हिन्दुओं एवं दलित वर्ग दोनों के लिये खतरनाक है। उनका कहना था कि दलित वर्ग की सामाजिक हालत सुधारने के लिये इसमें कोई व्यवस्था नहीं की गयी है। एक बार यदि पिछड़े एवं दलित वर्ग को पृथक समुदाय का दर्जा प्रदान कर दिया गया तो अश्पृश्यता को दूर करने का मुद्दा पिछड़ा जायेगा और हिन्दू समाज में सुधार की प्रक्रिया अवरुद्ध हो जायेगी। उन्होंने स्पष्ट किया कि पृथक

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

निर्वाचक मंडल का सबसे खतरनाक पहलू यह है कि यह अछूतों के सदैव अछूत बने रहने की बात सुनिश्चित करता है। दलितों के हितों की सुरक्षा के नाम पर न ही विधानमंडलों या सरकारी सेवाओं में सीटें आरक्षित करने की आवश्यकता है और न ही उन्हें पृथक समुदाय बनाने की। अपितु सबसे मुख्य जरूरत समाज से अश्पृश्यता की कुरीति को जड़ से उखाड़ फेंकने की है।

गांधीजी ने मांग की कि दलित वर्ग के प्रतिनिधियों का निर्वाचन आत्म-निर्वाचन मंडल के माध्यम से वयस्क मताधिकार के आधार पर होना चाहिए। तथापि उन्होंने दलित वर्ग के लिये बड़ी संख्या में सीटें आरक्षित करने की मांग का विरोध नहीं किया। अपनी मांगों को स्वीकार किये जाने के लिये 20 सितंबर 1932 से गांधी जी आमरण अनशन पर बैठ गये। कई राजनीतिज्ञों ने गांधीजी के अनशन को राजनीतिक आंदोलन की सही दिशा से भटकना कहा। इस बीच विभिन्न राजनीतिक विचारधाराओं के नेता, जिनमें एम.सी. रजा, मदनमोहन मालवीय तथा बी.आर. अम्बेडकर सम्मिलित थे, सक्रिय हो गये। अंततः एक समझौता हुआ, जिसे पूना समझौता या पूनापैक्ट के नाम से जाना जाता है।

पूना समझौता

सितंबर 1932 में डा. अम्बेडकर तथा अन्य हिन्दू नेताओं के प्रयत्न से सवर्ण हिन्दुओं तथा दलितों के मध्य एक समझौता किया गया। इसे पूना समझौते के नाम से जाना जाता है। **इस समझौते के अनुसार-**

- दलित वर्ग के लिये पृथक निर्वाचक मंडल समाप्त कर दिया गया तथा व्यवस्थापिका सभा में अछूतों के स्थान हिन्दुओं के अंतर्गत ही सुरक्षित रखे गये।
- लेकिन प्रांतीय विधानमंडलों में दलितों के लिये आरक्षित सीटों की संख्या 47 से बढ़कर 147 कर दी गयी।
- मद्रास में 30, बंगाल में 30, मध्य प्रांत एवं संयुक्त प्रांत में 20-20, बिहार एवं उड़ीसा में 18-18, बम्बई एवं सिंध में 15-15, पंजाब में 8 तथा असम में 7 स्थान दलितों के लिये सुरक्षित किये गये।
- केंद्रीय विधानमंडल में दलित वर्ग को प्रतिनिधित्व देने के लिये संयुक्त व्यवस्था को मान्यता दी गयी।
- दलित वर्ग को सार्वजनिक सेवाओं तथा स्थानीय संस्थाओं में उनकी शैक्षणिक योग्यता के आधार पर उचित प्रतिनिधित्व देने की व्यवस्था की गयी।
- सरकार ने पूना समझौते को साम्प्रदायिक निर्णय का संशोधित रूप मानकर उसे स्वीकार कर लिया।

गांधीजी का हरिजन अभियान

सांप्रदायिक निर्णय द्वारा भारतीयों को विभाजित करने तथा पूना पैक्ट के द्वारा हिन्दुओं से दलितों को पृथक करने की व्यवस्थाओं ने गांधीजी को बुरी तरह आहत कर दिया था। फिर भी गांधीजी ने पूना समझौते के प्रावधानों का पूरी तरह पालन किये जाने का वचन दिया। अपने वचन को पूरा करने के उद्देश्य से गांधीजी ने अपने अन्य कार्यों को छोड़ दिया तथा पूर्णरूपेण **'अश्पृश्यता निवारण अभियान'** में जुट गये। उन्होंने अपना अभियान यरवदा जेल से ही प्रारंभ कर दिया था तत्पश्चात अगस्त 1933 में जेल से रिहा होने के उपरांत उनके आदोलन में और तेजी आ गयी।

अपनी कारावास की अवधि में ही उन्होंने **सितम्बर 1932 में 'अखिल भारतीय अश्पृश्यता विरोधी लीग'** का गठन किया

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

तथा जनवरी 1933 में उन्होंने **हरिजन नामक साप्ताहिक पत्र** का प्रकाशन प्रारंभ किया। जेल से रिहाई के उपरांत वे सत्याग्रह आश्रम वर्धा आ गये। साबरमती आश्रम, गांधीजी ने 1930 में ही छोड़ दिया था और प्रतिज्ञा की थी कि स्वराज्य मिलने के पश्चात ही वे साबरमती आश्रम (अहमदाबाद) में वापस लौटेंगे। **7 नवंबर 1933 को वर्धा से गांधीजी ने अपनी 'हरिजन यात्रा' प्रारंभ की**। नवंबर 1933 से जुलाई 1934 तक गांधीजी ने पूरे देश की यात्रा की तथा लगभग 20 हजार किलोमीटर का सफर तय किया। अपनी यात्रा के द्वारा गांधीजी ने स्वयं द्वारा स्थापित संगठन **'हरिजन सेवक संघ'** जगह-जगह पर कोष एकत्रित करने का कार्य भी किया। गांधीजी की इस यात्रा का मुख्य उद्देश्य था-हर रूप में अश्पृश्यता को समाप्त करना। उन्होंने कांग्रेस कार्यकर्ताओं से आग्रह किया की गांवों का भ्रमण हरिजनों के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक उत्थान का कार्य करें। दलितों को 'हरिजन' नाम सर्वप्रथम गांधीजी ने ही दिया था। हरिजन उत्थान के इस अभियान में गांधीजी 8 मई व 16 अगस्त 1933 को दो बार लंबे अनशन पर बैठे। उनके अनशन का उद्देश्य, अपने प्रयासों की गंभीरता एवं अहमियत से अपने समर्थकों को अवगत कराना था। अनशन की रणनीति ने राष्ट्रवादी खेमे को बहु तप्रभावित किया। बहु तसे लोग भावुक हो गये।

अपने हरिजन आंदोलन के दौरान गांधीजी को हर कदम पर सामाजिक प्रतिक्रियावादियों तथा कट्टरपंथियों के विरोध का सामना करना पड़ा। उनके खिलाफ प्रदर्शन किये तथा उन पर हिंदूवाद पर कुठाराघात करने का आरोप लगाया गया। सविनय अवज्ञा आदोलन तथा कांग्रेस का विरोध करने के निमित्त, सरकार ने इन प्रतिक्रियावादी तत्वों का भरपूर साथ दिया। अगस्त 1934 में लेजिस्लेटिव एसेंबली में 'मंदिर प्रवेश विधेयक' को गिराकर, सरकार ने इन्हें अनुग्रहित करने का प्रयत्न किया। बंगाल में कट्टरपंथी हिन्दू विचारकों ने पूना समझौते द्वारा हरिजनों को हिन्दू अल्पसंख्यक का दर्जा दिये जाने की अवधारणा को पूर्णतयाः खारिज कर दिया।

अभियान का प्रभाव

गांधीजी ने बार-बार यह बात दुहराई कि उनके हरिजन अभियान का उद्देश्य राजनीतिक नहीं है अपितु यह हिन्दू समाज एवं हिन्दुत्व का शुद्धीकरण आंदोलन है। वास्तव में गांधीजी ने अपने हरिजन अभियान के दौरान केवल हरिजनों के लिये ही कार्य नहीं किया। उन्होंने कांग्रेस के कार्यकर्ताओं को बताया कि जनआंदोलन के निष्क्रिय या समाप्त हो जाने पर वे स्वयं को किस प्रकार के रचनात्मक कार्यों में लगा सकते हैं। उनके आंदोलन ने राष्ट्रवाद के संदेश को हरिजनों तक पहुंचाया। यह वह वर्ग था, जिसके अधिकांश सदस्य खेतिहर मजदूर थे तथा धीरे-धीरे किसान आंदोलन तथा राष्ट्रीय आंदोलन से जुड़ते जा रहे थे।

आगे की रणनीति पर बहस

सविनय अवज्ञा आंदोलन की वापसी के उपरांत राष्ट्रवादियों के मध्य भविष्य की रणनीति के संबंध में द्वि-स्तरीय बहस प्रारंभ हुई-प्रथम, निकट भविष्य में राष्ट्रीय आंदोलन की रणनीति कैसी हो तथा द्वितीय, 1935 के भारत सरकार अधिनियम के तहत होने वाले 1937 के आगामी प्रांतीय चुनावों में, सत्ता में भागेदारी के प्रश्न पर किस रणनीति का अनुगमन किया जाये।

प्रथम चरण की व्याख्या

इस चरण में तीन अवधारणायें सामने आयीं। इनमें से प्रथम दो परम्परागत प्रतिक्रियावादी अवधारणायें थीं, जबकि तीसरी, कांग्रेस में सशक्त वामपंथी विचारों का प्रतिनिधित्व कर रही थी। ये तीनों अवधारणायें निम्नानुसार थीं-

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

- पहली अवधारणा के अनुसार, गांधीवाद की तर्ज पर रचनात्मक कार्य प्रारंभ किया जाये।
- दूसरी अवधारणा के अनुसार, एक बार पुनः संवैधानिक तौर-तरीकों से संघर्ष प्रारंभ करना चाहिए। इस मत के समर्थक 1934 के भावी केंद्रीय विधान सभा के लिये होने वाले चुनावों में भाग लेने का भी समर्थन कर रहे थे। इस मत के समर्थकों में आसफ अली, सत्यमूर्ति, डा. एम.ए. अंसारी, भूलाभाई देसाई तथा बी.सी. राय प्रमुख थे। इन सभी का मत था कि-

  राजनीतिक निराशा के इस दौर में, जबकि कांग्रेस जन-आंदोलन जारी रखने की अवस्था में नहीं हैं, उसे चुनावों में भाग लेकर विधानमंडल में प्रवेश करना चाहिए तथा राजनीतिक संघर्ष जारी रखना चाहिए, जिससे जनता का मनोबल गिरने न पाए।

  चुनाव में भाग लेने का तात्पर्य यह नहीं है कि वे केवल संवैधानिक राजनीतिक संघर्ष के माध्यम से स्वतंत्रता प्राप्ति में विश्वास रखते हैं। इसका मतलब एक अन्य राजनीतिक मोर्चा प्रारंभ करना है।

  इस नये राजनीतिक मोर्चे से कांग्रेस मजबूत होगी, जनता में उसका प्रभाव बढ़ेगा तथा जनता अगले दौर के आंदोलन के लिये तैयार हो सकेगी।

  विधान मंडल में कांग्रेस की उपस्थिति उसे नये राजनैतिक संघर्ष के लिये उपयुक्त मंच प्रदान करेगी।
- तीसरी अवधारणा का समर्थन कांग्रेस का सशक्त वामपंथी विचारों का समर्थक दल कर रहा था, जिसका नेतृत्व नेहरू के हाथों में था। यह गुट सविनय अवज्ञा आंदोलन को वापस लेकर उसके स्थान पर रचनात्मक कार्य प्रारंभ करने तथा विधान मंडल में भागेदारी, दोनों मतों का विरोधी था।

  इनका मत था कि ये दोनों तरीके जन-आंदोलन को उसके पथ से विमुख कर देंगे तथा उपनिवेशी शासन के विरुद्ध संघर्ष के मुख्य मुद्दे से जनता का ध्यान दूसरी ओर मोड़ देंगे। ये जन-आंदोलन को जारी रखने के पक्षधर थे। इनका मानना था कि आर्थिक संकट का यह दौर क्रांतिकारी आंदोलन का उचित समय है तथा जनता संघर्ष के लिये पूरी तरह तैयार है।

नेहरू के विचार

नेहरू ने कहा कि "न केवल भारतीय जनता अपितु पूरे विश्व की जनता के सम्मुख इस समय मुख्य लक्ष्य पूंजीवाद का समूल उन्मूलन तथा समाजवाद की स्थापना है"। नेहरू के विचार से सविनय अवज्ञा आदोलन को वापस लेना, रचनात्मक कार्य प्रारंभ करना तथा संसद में भागेदारी करना एक प्रकार की आध्यात्मिक पराजय, आदर्शा का समर्पण तथा क्रातिकारी पथ का परित्याग कर सुधारवादी पथ को अपनाने जैसा था।

उन्होंने सुझाव दिया कि समाज के वर्गीय चरित्र की वास्तविकता और वर्ग संघर्ष की महत्ता को स्वीकार करते हु ये समाज के स्वार्थपरक तत्वों को जनसाधारण के हितों की ओर मोड़ा जाना चाहिए। जमीदारों तथा पूंजीपतियों के विरुद्ध मजदूरों तथा किसानों के संघर्ष तथा उनकी मांगों का समर्थन किया जाना चाहिए। उन्होंने तर्क दिया कि मजदूरों और किसानों को वर्गीय आधार पर संगठित किया जाए जिससे कांग्रेस इन संगठनों की गतिविधियों एवं नीतियों को निर्देशित कर सके। नेहरू का मानना था कि वर्ग संघर्ष के अभाव में वास्तविक साम्राज्यवाद-विरोधी आंदोलन नहीं चलाया जा सकता।

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

नेहरू द्वारा संघर्ष-समझौता-संघर्ष की रणनीति का विरोध

• गांधीजी के नेतृत्व में कांग्रेस के एक बड़े तबके का मानना था कि साम्राज्यवादी शासन के विरुद्ध पहले संवैधानिक तरीके से जबरदस्त संघर्ष प्रारंभ करके आदोलन अचानक वापस ले लिया जाये, फिर सरकार के सुधारवादी कदमों से समझौता कर पुनः समय आने पर संघर्ष प्रारंभ कर दिया जाए। क्योंकि तीव्र संघर्ष के पश्चात् संघर्ष के सुप्तावस्था में आने पर जनसामान्य को अपनी सार्मथ्य बढ़ाने का मौका मिलेगा तथा सरकार को राष्ट्रवादी मांगों का प्रत्युत्तर देने का अवसर दिया जा सकेगा। जनसामान्य को अनिश्चितकालीन बलिदान की रणनीति नहीं अपनानी चाहिए। लेकिन यदि सरकार ने राष्ट्रवादी मांगों के संबंध में कोई सकारात्मक जवाब नहीं दिया तो जनसाधारण को पूरे सामर्थ्य से पुनः संघर्ष प्रारंभ कर देना चाहिए। इसे ही 'संघर्ष-समझौता-संघर्ष की रणनीति' कहते हैं।

नेहरू, संघर्ष-समझौता-संघर्ष की इस रणनीति से असहमत थे। उन्होंने तर्क दिया कि लाहौर अधिवेशन में पूर्णस्वराज्य के कार्यक्रम को तय किये जाने के पश्चात भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन उस अवस्था में पहुंच गया है, जहां हमें उपनिवेशिक सत्ता से तब तक संघर्ष करते रहना होगा, जब तक कि हम उसे पूर्णरूपेण उखाड़ फेंकने में सफल न हो जायें। उन्होंने इस बात पर बल दिया कि कांग्रेस को 'निरंतर संघर्ष की नीति' का पालन करना चाहिए तथा उसे साम्राज्यवादी ढांचे से सहयोग एवं समझौते के जाल में नहीं फंसना चाहिए। उन्होंने कांग्रेस की चेताया कि अत्यंत शक्तिशाली औपनिवेशिक सत्ता को आने-चार आने की ताकत द्वारा पराजित नहीं किया जा सकता। अपितु इसके लिये सतत संघर्ष अपरिहार्य है। उन्होंने संघर्ष-समझौता-संघर्ष की रणनीति का विरोध करते हुये उसके स्थान पर संघर्ष-विजय की रणनीति का प्रतिपादन किया।

अंततः सत्ता में भागेदारी पर सहमति

इस समय भारतीय राष्ट्रवादी जहां एक ओर असमंजस की स्थिति में थे, वहीं दूसरी ओर ब्रिटिश हुकूमत यह मानकर चल रही थी कि कांग्रेस में सूरत विभाजन की तरह शीघ्र ही एक और विभाजन होना लगभग तय है। किंतु इस अवसर पर गांधीजी ने दूरदर्शितापूर्ण नीति अपनाकर कांग्रेस को विभाजित होने से बचा लिया। यह जानते हुए भी कि स्वतंत्रता प्राप्त करने का सबसे प्रमुख और एकमात्र तरीका सत्याग्रह ही है, उन्होंने कॉसिलों में भागेदारी के समर्थकों की मांगे स्वीकार कर ली। उन्होंने कहा कि "संसदीय राजनीति से स्वतंत्रता हासिल नहीं की जा सकती किंतु वे सभी कांग्रेस जन जो न तो स्वयं को रचनात्मक कार्यों में लगा सकते और न ही सत्याग्रह में भाग ले सकते, वे सभी संसदीय राजनीति के माध्यम से स्वयं को सक्रिय बनाये रख सकते हैं बशर्ते कि वे संविधानवादी या सुविधावादी न बन जायें"। साथ ही गांधीजी ने वामपंथियों को आश्वस्त करते हुये भी कहा कि "सविनय अवज्ञा आंदोलन को वापस लेना आवश्यक एवं तत्कालीन राजनीतिक परिस्थितियों में उचित कदम था, लेकिन इसका तात्पर्य राजनीतिक अवसरवादिता के सम्मुख समर्पण या साम्राज्यवाद से समझौता नहीं है"।

मई 1934 में अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी का अधिवेशन पटना में हुआ, जहां चुनाव में भाग लेने के लिये एक संसदीय बोर्ड का गठन किया गया। गांधीजी ने महसूस किया कि कांग्रेस में उभर रही सबसे सशक्त धारा से वह कट से गये हैं। वे जानते थे कि बुद्धजीवी वर्ग का एक बड़ा तबका संसदीय राजनीति के पक्ष में है, जबकि वे मौलिक तौर पर संसदीय राजनीति के विरोधी थे। बुद्धिजीवी वर्ग का दूसरा खेमा गांधी जी के रचनात्मक कार्यो यथा-चरखा कातने इत्यादि से असहमत था, जिसे गांधीजी 'राष्ट्र का दूसरा हृदय' कहते थे। जवाहरलाल नेहरू के नेतृत्व में समाजवादी

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789

गुट भी गांधीजी की नीतियों से असहमत था। इसी कारण 1934 में गांधीजी ने कांग्रेस से इस्तीफा दे दिया और कहा कि वे "कांग्रेस एवं उसमें उभरती नयी विचारधारा पर नैतिक दबाव डालकर उसे रोकना नहीं चाहता क्योंकि यह मेरे अहिंसा के सिद्धांत के विपरीत है"।

नेहरू और समाजवादियों ने भी राष्ट्रीय हितों को सर्वोपरि रखा। कांग्रेस के विरोधियों का मत था कि नेहरू एवं समाजवादियों के द्वारा कांग्रेस में किये जा रहे मौलिक परिवर्तनों से कांग्रेस विभाजित हो जायेगी, किंतु ऐसा नहीं हुआ। नेहरू एवं समाजवादियों ने इस खतरे को भांपकर अपनी प्राथमिकतायें तय कर लीं। उनका मत था कि सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन की प्रक्रिया प्रारंभ करने से पहले उपनिवेशी शासन को समाप्त करना आवश्यक है तथा साम्राज्यवाद विरोधी संघर्ष में कांग्रेस का सहयोग करना जरुरी है। क्योंकि कांग्रेस ही भारतीयों का एकमात्र प्रमुख संगठन है।

नेहरू एवं समाजवादियों का तर्क था कि वैचारिक या राजनीतिक शुद्धीकरण के नाम पर कांग्रेस से त्यागपत्र देने या उससे नाता तोड़ने की बजाय कांग्रेस में रहकर उसे जुझारू चरित्र प्रदान करना कहीं ज्यादा आवश्यक है। दक्षिणपंथियों ने भी इस मसले पर सही

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/

FB PAGE https://www.facebook.com/manishrai28/ Like
Join Whatsapp 9610577789